अंक 1
संख्या 7

मंगलवार
17 दिसम्बर
सन् 1946 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव..... 1

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 17 दिसम्बर सन् 1946 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 11 बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में प्रारम्भ हुई।

माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित ने अपना परिचय-पत्र पेश कर रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये।

***सभापतिः** श्रीमती पंडित अमेरिका के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में बहुत बड़ी सफलता पाकर स्वदेश लौटी हैं। मैं हृदय से उनका स्वागत करता हूं। *(हर्ष-ध्वनि)* मुझे विश्वास है कि मेरे साथ समूची सभा उनका हृदय से स्वागत करती है जैसा कि तुमुल हर्ष-ध्वनि से स्पष्ट है। *(प्रशंसा-सूचक ध्वनि)* ऐसा भी कोई सदस्य है जो रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना चाहता हो?

(कोई नहीं)

लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव पर बहस—*(गत संख्या से आगे)*

***सभापतिः** अब हम प्रस्ताव और संशोधनों पर बहस-मुबाहिसा जारी करते हैं। मेरे पास उन सदस्यों की एक बड़ी सूची है जो बोलना चाहते हैं और उसमें 50 से ज्यादा नाम हैं। मैं नहीं समझ पाता कि इन 50 वक्ताओं को बोलने का मौका मैं कैसे दे सकूंगा। इनके अलावा और लोग भी शायद बोलना चाहते हों। इसलिए मैं खुद वक्ताओं को चुन लूंगा। हो सकता है कि इससे बाज हल्कों में कुछ असंतोष हो, पर मेरी समझ में इसके सिवा और चारा नहीं है। मैं वक्ताओं से अनुरोध करूंगा कि जहां तक हो सके वे संक्षेप में बोलें, क्योंकि बोलने वाले बहुत हैं और हमें यह प्रस्ताव पास करके आगे का काम करना है। हमारी बैठक रोज दो घंटा होती है और अगर हर वक्ता 15 मिनट ले तो 50 वक्ताओं के लिए 6 दिन चाहिएं और हमारी बैठक सुबह-शाम दोनों वक्त हो तो तीन दिन लगेंगे। मैं नहीं समझता कि हम लोग इस प्रस्ताव पर इतना समय दे सकेंगे। इसलिए मैं वक्ताओं से अनुरोध करूंगा कि वे जहाँ तक हो सके संक्षेप में ही अपनी बात खत्म कर दें। मैं वक्त की पाबंदी नहीं लगाऊंगा। 10 मिनट का समय हर वक्ता के लिए काफी समझा जा सकता है। अब मैं श्री मसानी से कहूंगा कि वे सभा के सामने अपनी बात कहें।

***श्री एम.आर. मसानी** बम्बई : जनरल): सभापति महोदय, प्रस्ताव पर कुछ भी बोलने से पहले मैं यह साफ-साफ कह देना चाहता हूं कि मैं इस प्रस्ताव पर किसी सम्प्रदाय का सदस्य होने के नाते नहीं बोल रहा हूं आज (हमारा

---

*इस संकेत का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एम.आर. मसानी]

देश दुर्भाग्य से सम्प्रदायों में बँटा है) बल्कि केवल एक भारतीय की हैसियत से इस पर बोल रहा हूं। *(हर्ष-ध्वनि)* यद्यपि मैं भारत के एक बड़े छोटे अल्प-संख्यक सम्प्रदाय का सदस्य हूं पर फिर भी मैं एक भारतीय की हैसियत से ही बोलूंगा। भारत में आने वाली अन्य जातियों की तरह हमारी जाति को भी यहां वही स्वागत, वही आतिथ्य और वही सुरक्षा मिली जिसका जिक्र अभी प्रस्ताव का समर्थन करते हुए श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन ने किया था। मुझे आशा है कि भारत के अल्पसंख्यक सम्प्रदाय यहां के बहुसंख्यक सम्प्रदाय के साथ एक जाति या राष्ट्र के रूप में समुन्नत होने की प्रक्रिया में लगे रहेंगे। इस प्राचीन देश में जो-जो भी नई जातियां आईं इसमें घुल-मिल गईं और यह प्रक्रिया कई शताब्दियों तक चलती रही। पर गत कुछ शताब्दियों से जात-पात की कट्टरता के कारण तथा पृथक्-पृथक् समाज बन जाने से इस प्रक्रिया में बाधा पड़ गई है। इस समय मैं इतना ही कहूंगा कि राष्ट्र या जाति की कल्पना में किसी ऐसे अल्पमत की गुंजाइश नहीं है जो सदा अल्पमत ही बना रहे। या तो राष्ट्र अल्पसंख्यकों को अपने में जज्ब कर लेगा या फिर काल-क्रम से यह खुद ही मिट जायेगा। इसलिए प्रस्ताव में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा की जो व्यवस्था है उसका स्वागत करते हुये मैं यह कहूंगा कि कानूनी व्यवस्था तो ठीक है पर ऐसी कोई भी व्यवस्था अल्पसंख्यकों को जबरदस्त बहुमत या जनता के दबाव से नहीं बचा सकती जब तक कि दोनों ओर से एक-दूसरे से नजदीक आने की और मिल-जुल कर एक सुसंगठित सजातीय राष्ट्र बनने की कोशिश न हो। अमेरिका ने इस बात का उदाहरण हमारे सामने रखा हैं वहां भिन्न-भिन्न जाति, फिरके के लोगों ने आपस में मिल-जुलकर, सिवा एक अपवाद के, एक राष्ट्र का रूप ग्रहण कर लिया है।

इस सभा का शायद ही कोई सदस्य ऐसा हो जो उस वक्तृता से प्रभावित न हुआ हो और गौरवबोध न किया हो जिसके साथ माननीय प्रस्तावक महोदय ने प्रस्ताव पेश किया था। उन्होंने भविष्य को खूब गौर से देखा और यह जानने की कोशिश की कि भारतवासियों के भविष्य का क्या स्वरूप होगा। उन्होने यह अपील की है कि हम इस प्रस्ताव को एक बुनियादी चीज समझें और उसके शब्दों पर कानूनी झगड़े या बहस से बचें। इस अपील के जवाब में, सभापति जी, जो चन्द मिनट का समय आपने मुझे दिया है उसके अन्दर मैं सभा का ध्यान प्रस्ताव के उस पहलू की और खींचूंगा जिसे मैं प्रस्ताव का सामाजिक और टिकाऊ पहलू कह सकता हूं और इस बात पर विचार करूंगा इसे समझने की कोशिश करूंगा, कि प्रस्ताव में इस देश के निवासियों के लिए किस तरह के समाज, राज्य या जीवन-पद्धति की व्यवस्था की गई है। मैं समझता हूं कि हमारा जो फिलहाल झगड़ा है उसे अलग रख दें तो देश की साधारण जनता का अधिक से अधिक ध्यान प्रस्ताव के इस पहलू पर ही जायेगा।

प्रस्ताव के इस भाग को मैं एक उस प्रजातंत्रीय समाजवादी की दृष्टि से देखता हूं जो यह महसूस करता है कि अब प्रजातंत्र न केवल राजनैतिक दायरे तक ही

सीमित रहना चाहिए वरन् इसका प्रसार आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में भी होना चाहिए अन्यथा समाजवाद व्यर्थ है। बावजूद इस बात के कि इस प्रस्ताव में प्रजातंत्र और समाजवाद का उल्लेख नहीं है, मैं इसका स्वागत करता हूं। शायद ये शब्द इसमें जानबूझ कर नहीं रखे गए हैं क्योंकि प्रजातंत्र समाजवाद आदि शब्दों से ढेर-के ढेर गुनाह ढके जा सकते हैं जैसा कि अभी मेरठ-कांग्रेस के मौके पर हमारे एक नेता ने अपने सभापति के भाषण में कहा था कि शब्दजाल से प्रायः सत्य पर परदा पड़ जाया करता है। हम जानते हैं कि फ्रांसीसी राज्य-क्रांति की उत्पत्ति बन्धुता के नाम पर हुई थी पर फ्रांसीसी क्रांति के अवसान काल में एक हंसोड छिद्रान्वेषी में कहा था—

> ''जब मैंने देखा कि बन्धुत्व के नाम पर लोग क्या अनर्थ कर रहे हैं तो मैंने यह सोचा अगर मेरे अपना भाई होता तो मैं उसे भतीजा कहने लगता।''

मुझे डर है कि अन्य क्रांतियों के सम्बन्ध में भी यही तथ्य है।

सभापति जी, मैं एक समाजवादी की हैसियत से इस प्रस्ताव के इस भाग का स्वागत करता हूं क्योंकि आर्थिक प्रजातंत्र का सार इस प्रस्ताव में सन्निहित है, यद्यपि इसका दिखावटी लेबुल इस पर नहीं लगा हुआ है जैसा कि माननीय प्रस्तावक महोदय ने ठीक ही कहा है। यह प्रस्ताव मेरे ख्याल में, वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को नामंजूर करता है। प्रस्ताव के 5वें पैरे में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय के सम्बन्ध में जो बात कही गई है उनका इसके सिवा कोई मतलब नहीं है। मैं नहीं समझता कि सभा का कोई भी उपस्थित सदस्य यह मानता होगा कि हमारा वर्तमान सामाजिक संगठन न्याय के आधार पर हुआ है। मैं समझता हूं कि ऐसा अनुमान किया जाता है कि अगर आज हमारी मौजूदा राष्ट्रीय आय बराबर-बराबर तीन भागों में बांटी जाये तो एक तिहाई यहां की 5 प्रतिशत आबादी को मिलती है, दूसरी तिहाई 33 प्रतिशत को और बाकी तिहाई शेष 62 प्रतिशत आबादी पायेगी। अवश्य ही यह कोई सामाजिक और आर्थिक न्याय नहीं है। इसलिए जैसा कि मैं समझता हूं यह प्रस्ताव देश की वर्तमान भयंकर असमानता को कभी नहीं बरदाश्त करेगा। यह इस बात को कभी न बरदाश्त करेगा कि मेहनत तो करे कोई और उसका लाभ ले दूसरा ही व्यक्ति। अवश्य ही इस प्रस्ताव का यह मतलब है कि सर्वसाधारण के लाभ के लिए जो भी श्रम किया जायेगा, उसके फल में श्रम करने वाले व्यक्ति को उचित हिस्सा मिलेगा। इस प्रस्ताव का यह भी मतलब है कि विधान के अंतर्गत इस देश के निवासियों को सामाजिक सुरक्षा पाने का हक होगा। अर्थात् वह काम करेगा और समाज को उसका प्रतिपालन करना होगा। प्रस्ताव में यह व्यवस्था भी है कि सबको समान अवसर प्राप्त हो सके। अवसर की समानता से यह बात स्वयं सिद्ध है कि सबको शिक्षा की और प्रतिभा-विकास की समान सुविधा प्राप्त होगी। आज हमारे विशाल जन-समूह के अन्दर ढेर-की-ढेर प्रतिभा दबी हुई पड़ी है जिसे विकास पाने और मुल्क की तरक्की में हाथ बंटाने का मौका नहीं मिलता है। अवसर की समानता का यही मतलब है कि देश के प्रत्येक

[श्री एम.आर. मसानी]

बालक-बालिका को अपने-अपने विशेष गुणों को विकसित करने का समान अवसर दिया जायेगा जिससे वह सार्वजनिक हित के कामों में हाथ बंटा सके।

प्रस्ताव का यह समाजवादी पहलू है। इस प्रस्ताव में समाजवाद की व्यवस्था नहीं रखी गई है। इस तरह की व्यवस्था करना भी भूल होगी क्योंकि इस सभा को इस बात का आदेश नहीं प्राप्त है कि वह देश में बड़े-बड़े आर्थिक परिवर्तन लाये, ऐसे व्यापक परिवर्तन तो कोई नियमानुमोदित पार्लियामेंट ही अस्तित्व में आने पर जनमत के आदेश से कर सकती है। विधान-परिषद् होने के नाते यह सभा केवल इतना ही कर सकती है कि एक विधान बना दे जिसमें ऐसे व्यापक परिवर्तनों की व्यवस्था हो जिनकी मुल्क में जरूरत है। सभापति जी, मैं यह मानता हूं कि कट्टर से कट्टर समाजवादी को भी संतुष्ट करने की यथा सम्भव व्यवस्था इसमें की गई है।

जैसा मैं कह चुका हूं, मैं इस प्रस्ताव को एक प्रजातंत्रीय समाजवादी की दृष्टि से देखता हूं और यदि इसमें समाजवाद का तत्व है तो फिर इसमें प्रजातंत्र का भी सार है। मैं नहीं समझता कि यहां 'रिपब्लिक गणतंत्र शब्द' का समावेश काफी है। जैसा कि पं. जवाहरलाल जी ने खुद कहा है, यह तो मुमकिन है कि राजा-विहीन लोकतंत्र में (Republic) में वास्तविक लोकतंत्र (Democracy) न हो। अगर हम वर्तमान संसार पर दृष्टि दौड़ायें तो मालूम होगा कि ऐसे कितने ही प्रदेश हैं जहां राजा-विहीन लोकतंत्र होने पर भी वास्तविक लोकतंत्र का अभाव है। इसलिए इतना कहने के बाद भी कि हमारा राज्य रिपब्लिक होगा हमें इस बात को साफ कर देना चाहिए जैसा कि पैरा 4 और 5 में किया गया है कि हमारी दृष्टि में प्रजातंत्र का यह अर्थ नहीं है कि पुलिस का शासन हो और लोगों को बिना मुकदमा चलाये ही खुफिया पुलिस गिरफ्तार कर ले या जेल दे दे। प्रजातंत्र का मतलब यह नहीं है कि राज्य ही सब कुछ हो और प्रजा मानो महज राज्य का आदेश मानने के लिए ही हो, और एक दल का शासन चले और विरोधी दलों को कुचल दिया जाये और उन्हें अपना मन्तव्य प्रकट करने का समान अवसर न दिया जाये इसका मतलब ऐसे राज्य या समाज से नहीं है, जहां व्यक्ति की कोई हैसियत न हो और वह राज्य की बड़ी मशीनरी का महज एक छोटा आज्ञा-वाहक पुरजा ही समझा जाये। पं. जवाहरलाल नेहरू ने यह बताया है कि यह प्रस्ताव प्रजातंत्र के आधार पर बनाया गया है और हमारा सम्पूर्ण अतीत इस बात का साक्षी है कि हम प्रजातंत्र चाहते हैं और कुछ नहीं। परन्तु हमारा अतीत ही हमारे प्रजातंत्रीय विश्वास का साक्षी नहीं है हमारा वर्तमान भी इसी को व्यक्त करता है।

हमारे राष्ट्रीय जीवन का प्रवाह बहुमुखी है पर व्यक्ति की स्वतंत्रता और लोकतंत्रीय राज्य के हम सभी हामी हैं। यह बात बताने के लिए कि हमारे देश में व्यापक अन्तर वाली विचारधाराओं के लोग आज किस तरह इस बात पर एकमत हैं कि अधिकार और शक्ति साधारण जनता में बांट दिये जाये, राजनैतिक और आर्थिक

अधिकार इतने विस्तृत पैमाने पर बांट दिये जायें कि कोई व्यक्ति या वर्ग दूसरों का शोषण न कर सके उन पर हावी न हो सके, मैं सर्वप्रथम उस व्यक्ति का कथन उदृधृत करूंगा जो हमारे बीच मौजूद नहीं है और जिसको प्रस्तावक महोदय ने राष्ट्र का जनक कह कर उल्लेख किया था। मैं महात्मा गांधी की बात कहता हूं। *(हर्ष-ध्वनि)* ये है गांधीजी के शब्द जिन्हें श्री लुइस फिशर ने अपनी किताब 'ए वीक विद् गांधी' (गांधी के साथ एक सपतह) में उद्धृत किये हैं:

> ''इस समय समस्त क्षमता नई दिल्ली, कलकत्ता और मुम्बई में ही केंद्रित है और मैं चाहता हूं कि यह क्षमता हिंदुस्तान के सात लाख ग्रामों में बांट दी जाये''। ''ऐसा होने पर इन सात लाख ग्रामों में परस्पर स्वेच्छापूर्वक सहयोग की भावना उत्पन्न होगी। लोग जबरदस्ती बाध्य किये जाने पर ही सहयोग नहीं देंगे जैसा कि नाजी-व्यवस्था में है। इस स्वेच्छापूर्वक सहयोग से वास्तविक स्वतंत्रता और एक नवीन व्यवस्था का जन्म होगा जो रूस की वर्तमान व्यवस्था से भी ऊंची होगी" ''कुछ लोग कहते हैं कि रूस में दमन है पर यह दमन राष्ट्र के बहुत गरीब और नीचे पड़े हुए वर्ग की भलाई के लिए ही किया जाता है। मुझे इसमें कोई भलाई दिखाई नहीं देती।''

एक दूसरी ही श्रेणी के विचारक के विचारों में भी यही ध्वनि मिलती है। भारतीय समाजवादी दल के नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने अभी हाल में समाजवाद के वास्तविक स्वरूप के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है उससे चन्द वाक्य मैं यहां उद्धृत करता हूं। मुझे अफसोस है कि वे हमारे काम में अभी तक यहां शामिल नहीं हुए हैं। पर उनका कथन मैं उद्धृत करता हूं जो आप देखेंगे कि महात्माजी के विचारों की प्रतिध्वनि स्वरूप है। आप कहते हैं:

> ''समाजवादी व्यवस्था वाले राज्यों के दुर्बल होने का तो कोई अंदेशा ही नहीं है बल्कि उससे सदा यह भय बना रहता है, जैसा आज रूस में है, कि वह सही सत्ता हस्तगत करके प्रजापीड़क बन जायेगा और नागरिकों की जीवन व्यवस्था अपने हाथ में रख लेगा। इस तरह वहां राज्य ही सर्वेसर्वा हो जाता है जैसा कि आज रूस में हम देखते हैं। यदि कल-कारखानों के स्वामित्व और उनकी संचालन व्यवस्था को व्यक्तियों के हाथ से ले ली जाये और गांवों को प्रजातंत्र में परिवर्तित कर दिया जाये तो राज्य के सर्वेसर्वा बनने का डर बहुत कुछ जाता रहता है।''

इस तरह मेरी कल्पना के अनुसार समाजवादी भारत एक आर्थिक एवं राजनैतिक प्रजातंत्र होगा। उस प्रजातंत्र में मनुष्य न तो पूंजी का गुलाम होगा और न दल या राज्य का ही। वह पूर्ण स्वतंत्र होगा।

आज यह दलील पेश करने का रिवाज-सा चल गया है कि तब तक कोई आवश्यक सामाजिक और राजनैतिक परिवर्तन नहीं किये जा सकते जब तक कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता और प्रजातंत्र को समाप्त न कर दिया जाये और सर्वशक्तिशाली राज्य अपने कार्यक्रम को जोर देकर पूरा न करे। यह प्रस्ताव, यदि मैं इसे सही-सही

[श्री एम.आर. मसानी]

समझता हूं तो इस मत का खंडन करता है। प्रस्ताव में बड़े व्यापक सामाजिक परिवर्तनों की कल्पना की गयी है अर्थात् सही-सही माने में सामाजिक न्याय प्रदान करने की बात प्रस्ताव में कही गयी है। खूबी यह है कि राजनैतिक प्रजातंत्र और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के जरिये ही ये सब आवश्यक परिवर्तन किये जायेंगे। उन निराशावादियों को या हर काम में पराजय की मनोवृत्ति रखने वाले सज्जनों को, जो यह कहते हैं कि ऐसा करना असंभव है, यह प्रस्ताव कहता है कि यह किया जा सकता है और हम इसे करने के लिये कमर कस चुके हैं। वर्तमान समय की प्रधान समस्या यह है कि आया जनता राज्य के आधीन है या राज्य जनता के आधीन। जहां राज्य जनता के आधीन है वहां राज्य सिर्फ एक साधन है। वहां राज्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता को उतनी ही दूर तक अपने हाथ में ले सकता है जहां तक जनमत चाहता है और जहां जनता ही राज्य के आधीन है वहां प्रजा राज्यरूपी विशाल मशीनरी का सिर्फ मनुष्यरूपी पुर्जा है जिसको एक शक्तिशाली डिक्टेटर या राजनैतिक दल अपने इशारे पर नचाया करता है। सभापति जी, मेरा तो विश्वास है कि प्रस्तुत प्रस्ताव ऐसा विधान बनाने का आदेश देता है जिसमें जनता के हाथ में अधिकार होंगे और जहां व्यक्ति की ओर ध्यान दिया जायेगा और व्यक्ति विकास ही जहां समाज का लक्ष्य होगा। अपने इस विश्वास के कारण ही मैं प्रस्ताव के इस भाग का समर्थन करता हूं; क्योंकि मेरा विश्वास है कि प्रत्येक भारतीय नागरिक को स्वतंत्रता का, सुख तलाश करने का पूरा अधिकार है जैसा कि अमेरिकन विधान के निर्माताओं ने अपने नागरिकों के अधिकारों के सम्बन्ध में कहा है। *(हर्ष-ध्वनि)*

श्री एफ.आर. एन्थॉनी (बंगाल : जनरल): सभापति महोदय, डॉ. जयकर के संशोधन का समर्थन करने के लिये मैं खड़ा हुआ हूं। पंडित नेहरू के प्रस्ताव और डॉ. जयकर के संशोधन पर मैंने खूब सोच-विचार किया है। प्रस्ताव के गाम्भीर्य की, उसके निश्चय-मूलक स्वरूप की मैं प्रशंसा करता हूं पर संशोधन का समर्थन मैं केवल कानूनी दलीलों की बिना पर नहीं करने जा रहा हूं। मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि प्रस्ताव का पहला हिस्सा हमारे इस पक्के इरादे का ऐलान करता है कि हम भारत को स्वतंत्र, खुद मुख्तार प्रजातंत्र बनायेंगे। मैं जानता हूं कि कांग्रेस दल इस बात को अपना धर्म समझता है। यह प्रस्ताव उन महान् लक्ष्यों और आदर्शों को जाहिर करता है जिनके लिये कांग्रेस ने इतने दिनों तक कठिन संघर्ष किया है। इसलिये कोई भी सदस्य इस बात का साहस नहीं कर सकता है और न करना चाहिये कि वह कांग्रेस से कहे कि इस परम उपयुक्त अवसर पर वह अपनी चिरकालीन प्रतिज्ञा को न दुहराये। इसके अलावा यह एक ऐसी प्रतिज्ञा है जो प्रत्येक भारतीय के दिल में घर कर चुकी है। मैं जानता हूं

कि हम लोगों के सामने अनेक उदाहरण हैं कि हमारी तरह अन्य विधान-परिषद्‌ों ने भी समवेत होने पर सबसे पहले अपने लक्ष्य की ही घोषणा की थी। हमारा भी उद्देश्य यही है कि हम भारत को स्वतंत्र सत्तासम्पन्न प्रजातंत्र घोषित करें। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने हमें ठीक ही कहा है कि हम लोकतंत्र (Republic) शब्द में अनावश्यक भय न देखें। यह तो सिर्फ इस बात को स्पष्ट करने के लिये रखा गया है कि हमारा विधान ऐसा हो जहां राजा-विहीन लोकतंत्र हो, न कि राजतांत्रिक लोकतन्त्र। साथ ही साथ पं. नेहरू ने इस बात पर भी जोर दिया है कि प्रस्ताव में खुदमुख्तार प्रदेशों (इकाइयों) पर यह पाबंदी नहीं है कि वे संघ में शामिल होकर अपने लिये राजतंत्रीय व्यवस्था नहीं रख सकते हैं। ये खुद मुख्तार प्रदेश संघ में शामिल होकर अपने शासन के लिये राजतंत्रीय या जैसी व्यवस्था चाहें रख सकते हैं। डॉ. जयकर के संशोधन का समर्थन मैंने इसी कारण से किया है कि मेरा विश्वास है कि इससे ये दोनों ही बातें पूरी होती हैं। संशोधन कांग्रेस प्रतिज्ञा का समर्थन करता है। यह हमारे इस इरादे को भी पुष्ट करता है कि हम स्वतंत्र भारतीय प्रजातंत्र के लिये विधान बनायेंगे। हो सकता है कि प्रस्ताव और संशोधन के शब्द एक से न हों। यदि प्रस्ताव के ही शब्द संशोधन में रखे गये होते तो ज्यादा अच्छा होता पर मैं समझता हूं कि वैधानिक दृष्टि से जहां तक अर्थ या भाव का सम्बन्ध है दोनों की वाक्य रचना समान है। डॉ. जयकर के संशोधन से हमारी यह एक दूसरी आवश्यकता भी पूरी हो जाती है कि हम प्रारंभ में ही उस बात की घोषणा कर देते हैं कि स्वतंत्र सर्वसत्ता सम्पन्न भारतीय प्रजातंत्र का विधान हम किन लक्ष्यों और उद्देश्यों के आधार पर बनायेंगे। मैं समझता हूं कि डॉ. जयकर के संशोधन का अभिप्राय यही है कि इस प्रस्ताव के बाकी हिस्सों की घोषणा हम अभी स्थगित रखें। अर्थात् प्रस्ताव के उस भाग की घोषणा अभी न करें जिसमें देशी रियासतों का तथा प्रान्तों और संघ के अधिकारों और कर्त्तव्यों का उल्लेख किया गया है। मैं समझता हूं कि संशोधन का यह आशय है कि हम एक ऐसी घोषणा, चाहे वह कितनी ही न्याय संगत क्यों न हो, न करें जिससे हम पर यह अभियोग ख्वाह वह बिल्कुल बेबुनियाद ही क्यों न हो, लगाया जा सके कि हमने उन तफसीली बातों को पहले से ही तय कर दिया जिन पर इस सभा में पूरी तरह से वाद-विवाद होना चाहिए था और सभी लोगों का मत लिया जाना चाहिये था। सभापति जी, यही बात है कि मैं डॉ. जयकर के संशोधन का समर्थन आवश्यक समझता हूं। राजनीतिज्ञता की भावना से यह उपस्थित किया गया है। यह इसलिये उपस्थित किया गया है कि हम सभी यह चाहते हैं कि हमारे दोनों प्रमुख दलों में अधिक-से-अधिक सद्‌भावना और मतैक्य हो, हम सभी चाहते हैं कि हमारे देशवासी आदान-प्रदान की भावना से परस्पर शक्तिसम्पन्न बनें और बनायें तथा आपस में प्रेम से रहें। इसलिये यह संशोधन मंजूर किया जाना चाहिये।

*डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी (बंगाल : जनरल): आदरणीय सभापति महोदय अपने देश के बहुरंगी इतिहास में हमने अक्सर भिन्न-भिन्न दलों की ओर से अपने देश के लिये स्वतंत्र सर्वसत्ता सम्पन्न राज्य की मांग के प्रस्ताव पास किये हैं। पर आज का प्रस्ताव एक खास और गंभीर महत्त्व रखता है। अपने इतिहास में ब्रिटिश हकूमत में आने के बाद आज पहला मौका है, जब हम अपना विधान बनाने के लिये एकत्र हुये हैं। यह बहुत बड़ी जिम्मेदारी है और वस्तुत: जैसा कि माननीय प्रस्तावक महोदय ने हमें याद दिलाया है, यह एक पवित्र कर्त्तव्य है, जिसे पूरा करने का हमने बीड़ा उठाया है और अपनी योग्यतानुसार यथाशक्ति इसे पूरा करने का हम इरादा रखते हैं। सभापति जी, डॉ. जयकर के संशोधन से कुछ ऐसे प्रश्न उठते हैं, जिनका बुनियादी महत्त्व हैं मुझे दु:ख है कि मैं इस संशोधन का समर्थन करने में असमर्थ हूं। इस संशोधन का यह अर्थ होता है कि हम इस आशय का कोई भी प्रस्ताव तब तक पास ही नहीं कर सकते, जब तक कि सेक्शनों की बैठक न हो जाये और वे अपनी सिफारिश न पेश कर दें। डॉ. जयकर यह चाहते हैं कि हम इस प्रस्ताव को तब तक न स्वीकार करें, जब तक कि देशी रियासतें और मुस्लिम लीग दोनों विधान-परिषद् में शामिल न हो सकें। जहां तक रियासतों की बात है वे चाहने पर भी परिषद् में तब तक शामिल नहीं हो सकतीं, जब तक कि सेक्शन बैठकर प्रान्तीय विधान न बना लें। इसका मतलब यह हुआ कि रियासतों के शामिल होने में कितने महीने लगेंगे कोई नहीं बता सकता। जहां तक मुस्लिम लीग का सवाल है, अवश्य ही प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का दु:ख है कि वह इस प्रारंभिक बैठक में सम्मिलित होने में असमर्थ है। पर इस बात की ही क्या गारंटी है कि अगर हम इस प्रस्ताव को आगामी 20 जनवरी तक स्थगित कर देते हैं जैसा कि डॉ. जयकर का सुझाव है, तो मुस्लिम लीग आयेगी और अधिवेशन में शरीक होगी।

सभापति जी, मैं समझता हूं कि इस प्रश्न पर हमें एक-दूसरे ही दृष्टिकोण से विचार करना होगा। सोचना यह है कि क्या इस प्रस्ताव में कोई ऐसी भी बात है, जो मंत्रिमंडल की 16 मई वाली योजना के विपरीत है। यदि प्रस्ताव में ऐसी बात है, जो उक्त योजना से सामंजस्य नहीं रखती तो निश्चय ही हम समय से पहले ही बहुत सी बातों का निर्णय कर लेते हैं और ऐसी बातों पर विचार करते हैं, जिन पर यह कहा जा सकता है कि हमें अभी विचार करने का अधिकार नहीं है। परन्तु यह योजना मुझे तो एक तिलस्म-सी जान पड़ती है। भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से इस पर विचार करके आप इसका भिन्न-भिन्न अर्थ निकाल सकते हैं। समूचे प्रस्ताव को ज्यों-का-त्यों रखकर देखिये कि यह क्या घोषणा करता है। यह कुछ ऐसी बुनियादी बातों का ऐलान करता है, जो योजना के अंतर्गत है। मैं जानता हूं कि अगर हम विस्तार में जायेंगे तो मुझे कम-से-कम एक ऐसे प्रसंग की चर्चा करनी होगी, जिस पर हम भिन्न-भिन्न मत रखते हैं। वह है अवशिष्ट अधिकारों का प्रश्न। पर इस बात को भी, इस प्रश्न को भी मंत्रिप्रतिनिधिमंडल की योजना ने विधान के अंतर्गत रखा है। यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर राष्ट्रीय

महासभा ने भी अपनी राय जाहिर कर दी है। इस प्रश्न पर मैं समझता हूं, मुस्लिम लीग भी अपना विचार व्यक्त कर चुकी है। हममें से कुछ लोग लीग के विचार से मतभेद रखते हैं और भारत की भलाई के ख्याल से एक मजबूत केंद्रीय सरकार पर जोर देते हैं। बाद में उपयुक्त मौके पर हम लोग इस प्रश्न पर विचार करेंगे। पं. जवाहरलाल नेहरू ने प्रस्तावक की हैसियत से इस बात का खुलासा कर दिया है कि यहां अभी हम भारत के लिये विधान नहीं बना रहे हैं। यहां इस प्रारंभिक अवस्था में हम केवल एक प्रस्ताव मंजूर कर रहे हैं, जिसमें भारत के भावी शासन विधान की रूपरेखा दी हुई है। दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं कि जब विधान-निर्माण का समय आयेगा और विधान विषयक प्रस्ताव उपस्थित होगा तो हमें अधिकार है कि हम सभा के सामने अपना संशोधन उपस्थित करें। सभा संशोधन के गुण-दोष के अनुसार उस पर अवश्य विचार करेगी। इस प्रस्ताव के पास हो जाने से सभा के सदस्यों पर ऐसी कोई कानूनी पाबंदी नहीं लगती है कि बाद में जब सभा विधान-निर्माण करेगी तो वे कोई संशोधन नहीं पेश कर सकते। आप दो बातों को देखिये एक तो यह कि कहीं यह प्रस्ताव मंत्रिप्रतिनिधिमंडल की योजना की मुख्य-मुख्य बातों के प्रतिकूल तो नहीं जाता है। दूसरे यह कि प्रस्तुत प्रस्ताव भावी विधान के विस्तार पर किसी तरह विधान-परिषद् को वचनबद्ध तो नहीं करता है। यदि ये दोनों बातें नहीं हैं तो मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि इस प्रस्ताव को इस समय मंजूर करने में क्यों कोई रुकावट डाली जाये।

प्रस्ताव एक निजी महत्त्व रखता है। आखिर हम यहां अपनी व्यक्तिगत हैसियत से नहीं आये हैं, बल्कि इस विशाल देश के निवासियों के प्रतिनिधि की हैसियत से हम यहां समवेत हुए हैं। ब्रिटिश पार्लियामेंट या ब्रिटिश गवर्नमेंट की स्वीकृति के बल पर हम यहां नहीं समवेत हुए हैं, बल्कि हम यहां समवेत हुए हैं भारतीय जनता की स्वीकृति के बल पर। *(हर्ष-ध्वनि)* और यदि यही सत्य है तो हमें न केवल नियमादि निर्माण के सम्बन्ध में यहां बोलना है, बल्कि जनता को हमें कुछ ठोस बातें बतानी होंगी कि हम भला सन् 1946 की 9वीं दिसम्बर को यहां क्यों समवेत हुए हैं। अगर वस्तुस्थिति वही है, जैसा डॉ. जयकर बता रहे हैं तो फिर विधान-परिषद् को बुलाना ही नहीं था और सच तो यह है कि डॉ. जयकर को भी सभा में न आना था। उनको चाहिए था कि गवर्नर जनरल को सूचित कर देते, ''मुझे खेद है कि आपका आमंत्रण नहीं स्वीकार कर सकता। मैं यह महसूस करता हूं कि विधान-परिषद् को बुलाकर आप भूल कर रहे हैं क्योंकि मुस्लिम लीग और देशी रियासतें उसमें नहीं शामिल हो रही हैं।'' पर यहां आकर इस तरह की आपत्ति उठाना तो मुस्लिम लीग के फंदे में पड़ना है और ब्रिटेन के प्रतिक्रियावादियों का हाथ मजबूत करना है। मैं जानता हूं डॉ. जयकर कभी भी ऐसा काम न करेंगे। मैं डॉ. जयकर के दृढ़विश्वास की प्रशंसा करता हूं। वस्तुतः जब हम समझते हों कि अमुक काम किया जाना चाहिये तो हममें इस बात की क्षमता होनी चाहिये कि आगे बढ़कर हम अपना विचार व्यक्त करें। पर मैं सम्मान-

[डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी]

पूर्वक डॉ. जयकर को बताना चाहता हूं कि उनके इस भोली सूरत वाले संशोधन में बड़ा खतरा है। मुझे आशा है कि डॉ. जयकर समय आने पर अपने संशोधन को वापस ले लेंगे।

इस प्रश्न के एक दूसरे पहलू पर भी मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। प्रस्ताव तो पास होगा पर इसे आप कार्यान्वित कैसे करेंगे। हमें सोचना होगा कि हमारे सामने क्या कठिनाइयां हैं जो इस प्रस्ताव को अमली रूप देने से हमें रोक सकती हैं। अवश्य ही एक कठिनाई तो यह है कि मुस्लिम लीग की गैरहाजिरी में इस परिषद् का क्या स्थान होगा? कल डॉ. जयकर ने इसकी तुलना एक भोज से की थी। उन्होंने कहा था ''फर्ज कीजिये दावत में कुछ लोग आमंत्रित किये जाते हैं। कुछ मेहमान आते हैं और कुछ नहीं। इस हालत में वह दावत होगी कैसे?'' पर आप यह बताना तो भूल ही गये कि फिर आये हुये मेहमानों की क्या गति होगी? कल्पना कीजिये कि डॉ. जयकर मेजबान हैं और आप 6 मेहमानों को दावत देते हैं। पांच मेहमान तो आते हैं पर एक अनुपस्थित रहता है। इस हालत में क्या डॉ. जयकर उन पांच मेहमानों को भूखा रखेंगे और यह कहकर घर से बाहर कर देंगे कि ''चलिये एक मेहमान नहीं आये और अब आपको भोजन नहीं दिया जायेगा।'' निश्चय ही वह ऐसा नहीं करेंगे। यहां भी लोग आये हैं उनकी स्वतंत्रता की भूख तृप्त करनी होगी। मिस्टर चर्चिल का कहना है कि मुस्लिम लीग की अनुपस्थिति में यह विधान-परिषद् उस शादी की तरह है जिसमें दुलहिन ही नदारद हो। मुझे नहीं मालूम कि मुस्लिम लीग और देशी रियासतें परिषद् में कब शामिल होंगी। मुझे यह भी नहीं मालूम है कि इस विधान-परिषद् की ऐसी कितनी दुलहिनें होंगी। जो भी हो, अगर मिस्टर चर्चिल का यही दृष्टिकोण है तो उन्हें एक यार का पार्ट तो न अदा करना चाहिए था। उन्हें चाहिए था कि मिस्टर जिन्ना से कहते कि ''हिन्दुस्तान वापस जाइये और विधान-परिषद् में उपस्थित होकर अपना विचार भारतीय जनता के सामने रखिये।'' किसी ने भी यह बात नहीं कही है कि मुस्लिम लीग को नहीं शामिल होना चाहिये। दरअसल हम तो यह चाहते हैं कि मुस्लिम लीग आवे ताकि हमारा और एक दूसरे का विचार विनिमय हो। अगर हमारे सामने कठिनाइयां हैं, मतभेद हैं तो हम यह नहीं चाहते कि सिर्फ बहुमत के बिना पर हम काम करते चले जायें। वह तो और कोई उपाय न रह जाने पर करना होगा। यह निश्चय है कि हर तरह की कोशिश की जानी चाहिये और जरूर की जायेगी कि भारत के भावी शासन विधान के सम्बन्ध में हम लोग किसी समझौते पर पहुंच जायें। पर मुस्लिम लीग को यहां आने से रोका क्यों जाता है? मेरा तो यह अभियोग है कि ब्रिटेन का रुख ही ऐसा है कि उससे बढ़ावा पाकर मुस्लिम लीग यहां नहीं आ रही है। मुस्लिम लीग को इस विश्वास के लिये बढ़ावा मिलता है कि अगर वह विधान-परिषद् में नहीं शामिल होती है तो वह विधान-परिषद् के फैसले को रद्द करने में कामयाब हो सकती है। यह विशेषाधिकार किसी-न

किसी रूप में फिर मुस्लिम लीग के हाथ आ गया है और यही खतरा है जो इस महती परिषद् की भावी कार्यवाही पर छाया हुआ है। सभापति जी, मैं विस्तार में नहीं जाऊंगा क्योंकि न तो समय है और न यह अवसर है कि ब्रिटिश मंत्रिप्रतिनिधिमंडल के वक्तव्य की विभिन्न बातों पर मैं बहस करूं। पर मैं इतना अवश्य कहूंगा कि यद्यपि फिलहाल विधान-परिषद् का निर्माण ब्रिटेन ने किया है पर एक बार अस्तित्व में आ जाने पर इसे इस बात का पूरा अधिकार है कि अगर वह चाहे तो भारत की स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिये तथा जाति, धर्म और सम्प्रदाय को भूलकर समूची जनता की भलाई के लिये जो भी आवश्यक और उचित समझती हो, करे। *(हर्षध्वनि)*

हमने यह बात कही है या यों कहिये कि राष्ट्रीय महासभा ने यह बात कही है, क्योंकि जिन राजनैतिक दलों से कैबिनेट मिशन की बातचीत चली थी उनमें कांग्रेस ही प्रधान दल था, कि कैबिनेट मिशन की 16 मई वाली योजना पर हम कायम हैं। मुझे कल बड़ी ही प्रसन्नता हुई जब माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल ने डॉ. जयकर को टोकते हुए यह कहा कि कांग्रेस ने 16 मई सन् 1946 के वक्तव्य के अलावा और कुछ नहीं स्वीकार किया है। *(हर्षध्वनि)* माननीय सरदार पटेल के इस ऐलान को मैं एक महत्त्वपूर्ण और बुनियादी बात मानता हूं। हमें यह बात स्पष्ट कर देनी है कि हम यहां किसलिये समवेत हुये हैं। मेरी राय में हम लोगों का रुख यह होना चाहिये कि ब्रिटिश मंत्रिमंडल की 16 मई वाली योजना को व्यावहारिक रूप देने का हम एक मौका देंगे। सच्चाई और ईमानदारी से हम इस बात की कोशिश करेंगे कि उक्त योजना के आधार पर अन्य दलों के साथ किसी समझौते पर पहुंच जायें। पर 16 मई सन् 1946 वाली योजना पर बाद में जो भी भाष्य दिये गये हैं हम उन्हें नहीं मानते और अगर कोई भी दल इस योजना से पीछे हटता है और अलग हो जाता है हम अपना काम प्रारंभ कर देंगे और इच्छानुसार विधान तैयार करेंगे।

16 मई सन् 1946 के वक्तव्य के एक वाक्यांश के सम्बन्ध में अर्थात् गुटबन्दी के प्रश्न पर काफी मतभेद चला आ रहा है। मंत्रिमंडल से बातचीत करने में कांग्रेस बहैसियत एक प्रधान दल के रूप में शामिल थी। इसलिये यह फैसला कांग्रेस को करना होगा कि वह क्या भाष्य स्वीकार करती है। अगर सम्राट की सरकार का भाष्य अस्वीकृत होता है और कांग्रेस यह समझती है कि ब्रिटिश मंत्रिप्रतिनिधि मंडल के वक्तव्य के गुटबन्दी वाले अंश पर उसका अपना भाष्य सही है तो अवश्य ही एक संकट की स्थिति पैदा हो जाती है। प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार करने के अतिरिक्त इस प्रश्न पर भी हमें विचार करना होगा। वस्तुतः जहां तक इस परिषद् की कार्यवाही की बात है, इस प्रश्न पर निर्णय करने में हम जितना ही विलम्ब करेंगे उतना अवास्तविकता का वातावरण उत्पन्न होता जायेगा। इस प्रश्न पर निर्णय हो जाने के बाद हम आगे बढ़ेंगे। मान लीजिये कि सम्राट की सरकार का भाष्य ही मंजूर होता है चाहे फैडरल कोर्ट में जाने पर या अन्यथा, फिर हम अपना काम शुरू करेंगे। मुस्लिम लीग फिर आवे या न आवे इस पर हमें कोई बहस नहीं।

[डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी]

अगर वह आती है तो बहुत खुशी का बात है परन्तु अगर नहीं भी आती है तो वह भारतीय स्वतंत्रता को रोक नहीं सकती। इस हालत में हमारा यह दावा है कि हम विधान-परिषद् में अपना काम जारी रखेंगे। सभापति महोदय, में समझता हूं कि यदि कोई संकट आया, जिसकी सम्भावना मुझे दिखाई दे रही है तो फिर हमारी आजादी वैधानिक उपायों से न प्राप्त होगी। गत कुछ दिनों के अंदर जो घटनायें घटी हैं उनको देखते हुए जान पड़ता है कि हमारा काम आसानी से न पूरा होगा। परन्तु एक बात पर मैं जरूर जोर दूंगा कि चाहे जो कुछ किया जाये वह विधान-परिषद् की मार्फत ही किया जाये और किसी के नहीं। हमें तो काम करना है और हम अपनी जिम्मेदारी पर काम करेंगे और एक ऐसा विधान तैयार करेंगे जिसे हम संसार के सामने पेश कर सकें और सबको इस बात पर संतोष दे सकें कि हमने समस्त भारतीय जनता के साथ, अल्पसंख्यकों के साथ न्याय और समानता का व्यवहार किया है।

आखिर दक्षिणी अफ्रीका के प्रश्न पर क्या हुआ? आज हमारे बीच में माननीया श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित बैठी हैं जो एक बड़ी शानदार जीत हासिल कर स्वदेश लौटी हैं। इस प्रश्न पर भी श्रीमती पंडित को सम्राट की सरकार से, हमारे स्वयंभू ट्रस्टी की ओर से कोई सहयोग नहीं मिला। वस्तुतः जहां तक ब्रिटेन का सम्बन्ध है उसने हमारे खिलाफ वोट दिया। फिर भी श्रीमती विजयलक्ष्मी की विजय हुई। संसार की अदालत में भारतीय प्रतिनिधिमंडल की जीत हुई। विधान-परिषद् के सम्बन्ध में भी यही बात हो सकती है यदि साहसपूर्वक एक ऐसा विधान बनायें जो न्यायसंगत हो, जिसमें सबको समान रूप से सुविधा प्राप्त होती हो तो आवश्यकता पड़ने पर हम इस विधान-परिषद् को स्वतंत्र सत्ता सम्पन्न भारतीय प्रजातंत्र की पहली पार्लियामेंट घोषित कर देंगे। *(हर्षध्वनि)* उस हालत में अपनी राष्ट्रीय सरकार कायम कर सकेंगे और उसके फैसलों को इस देश पर लागू कर सकेंगे। अभी कुछ मिनट पहले मैंने कहा है कि हम ब्रिटिश जनता या पार्लियामेंट की स्वीकृति के बल पर यहां समवेत नहीं हुए हैं। हम तो यहां समवेत हुए हैं भारतीय जनता की इच्छा के बल पर और इसलिए हमें अपनी अपील तो देशवासियों से ही करनी है।

जब हम अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में कुछ कहते हैं तो उससे ऐसा आभास मिलता है मानो केवल एक मुसलमान ही यहां अल्पसंख्यक हैं। पर बात ऐसी नहीं है। यहां और भी बहुत से सम्प्रदाय अल्पसंख्यक हैं। मैं बंगाल के दुर्दशाग्रस्त प्रान्त से आया हूं और इस सभा को याद दिलाना चाहता हूं कि भारत के कम-से-कम चार प्रान्तों में हिन्दू अल्पसंख्या में हैं। अगर अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करनी है तो सभी अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा होनी चाहिये। आप अल्पसंख्यकों के अधिकारों के लिये जो भी सुरक्षा-मूलक व्यवस्था करें उसका लाभ हर प्रान्त के अल्पसंख्यकों को मिलना चाहिये।

अभी कल रात को लार्ड साइमन ने यह आश्चर्यप्रद घोषणा की है कि दिल्ली में समवेत होने वाली विधान-परिषद् में तो केवल सवर्ण हिन्दू ही हैं। गत कई दिनों के अंदर विलायत से इतने झूठे वक्तव्य निकले हैं कि उनकी संख्या बतानी मुश्किल है। आखिर इस सभा में किसके प्रतिनिधि उपस्थित हैं? हिन्दुओं के प्रतिनिधि हैं और कुछ मुसलमानों के भी हैं। मुस्लिम प्रधान प्रान्त सीमा प्रान्त के प्रतिनिधि भी यहां मौजूद हैं। ये वहां की उस हुकूमत के प्रतिनिधि की हैसियत से आये हैं जो मुस्लिम लीग के बावजूद भी सीमाप्रांत में शासन चला रही हैं यहां आसाम के भी प्रतिनिधि हैं जिसे मिस्टर जिन्ना अपने काल्पनिक पाकिस्तान का एक भाग मानते हैं इस प्रान्त के भी बहुत से प्रतिनिधि यहां मौजूद हैं। इस सभा में हरिजन भी उपस्थित हैं। इस परिषद् के सभी हरिजन प्रतिनिधि यहां मौजूद हैं। डॉ. अम्बेडकर भी यहां मौजूद हैं। *(हर्षध्वनि)* हो सकता है वे हम से सभी बातों में सहमत न हों पर जब हम उन स्वार्थों और हितों पर विस्तारपूर्वक विचार करेंगे जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं तो हमें विश्वास है कि हम उनको भी (डॉ. अम्बेडकर को) अपने पक्ष में कर लेंगे। खूब *(हर्षध्वनि)* अन्य हरिजन प्रतिनिधि भी यहां मौजूदा हैं। सिखों के सब प्रतिनिधि यहां उपस्थित हैं। भारतीय ईसाइयों और एंग्लो इण्डियनों के प्रतिनिधि भी यहां मौजूद हैं। तो फिर लार्ड साइमन क्यों यह झूठ *(एक आवाज आईपारसी भी यहां मौजूद हैं)* हां और फिर पारसी सम्प्रदाय के भी प्रतिनिधि यहां मौजूद हैं। फिर भला लार्ड साइमन ने यह झूठ.....*(एक आवाज आई ''द्रविड़ प्रतिनिधि भी हैं'')*। आदिवासियों के प्रतिनिधि हमारे मित्र श्री जयपाल सिंह भी यहां मौजूद हैं। यथार्थ में मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों को छोड़ कर अन्य सभी निर्वाचित प्रतिनिधि यहां उपस्थित हैं। मुस्लिम लीग मुसलमानों के केवल एक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है और मैं मानता हूं कि मुस्लिम सम्प्रदाय का वह एक बहुत बड़ा वर्ग है। पर यह कहना तो सरासर झूठ है कि विधान- परिषद् में केवल सवर्ण हिन्दू ही शामिल हैं मानों सवर्ण हिन्दू इसीलिये पैदा ही हुये हैं कि दूसरों को सतायें और केवल ऐसा ही काम करें जो हिन्दुस्तान के हितों पर आघात पहुंचायें। सभा के सामने एक साहब ने सुझाव दिया है कि इस देश का कोई वर्ग अगर यहां अनुपस्थित रहना पसन्द करता है तो भारत को दास ही बना रहना चाहिये *('एक आवाज नहीं')* यह जवाब तो उनको दिया जाना चाहिये जो गैरहाजिर हैं, यह जवाब उनको मिलना चाहिये जो इन गैरहाजिरों को उभाड़ते हैं। सभापति जी, मैं तो कहूंगा कि हम लोग अंग्रेजों से यह आखिरी बार कह दें ''हम आपसे दोस्ताना ताल्लुक रखना चाहते हैं। इस देश में आपने व्यापारियों की तरह पदार्पण किया, एक याचक या प्रार्थी की हैसियत से आप महान् मुगल सम्राट के सामने आये। इस देश की अपार सम्पत्ति से आपने अपना वैभव बढ़ाना चाहा। भाग्य ने आपका साथ दिया। इस देश में आपने अपनी हुकूमत कायम की पर यहां के निवासियों के स्वेच्छापूर्ण सहयोग से नहीं वरन् धोखेबाजी से, जालसाजी से और जबरदस्ती करके और इतिहास इस बात का

[डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी]

गवाह है। आपने यहां पृथक् निर्वाचन की पद्धति चलाई, भारतीय राजनीति में आपने धर्म को घुसेड़ा। यह सब काम भारतीयों ने नहीं किया बल्कि आपने किया और इसलिये किया कि इस मुल्क में अपनी हुकूमत स्थायी बना दें। आपने उस देश में विशेष हितों की सृष्टि की और ये विशेष हित आज इतने अमिट हो बैठे हैं कि हम देशवासियों की हर चन्द कोशिश पर नहीं मिट पाते हैं। इन सब बातों के बावजूद भी अगर सचमुच आप यह चाहते है कि भारत और आपके बीच भविष्य में मित्रता बनी रहे तो हम आपकी मैत्री के लिये तैयार हैं। पर हमारे घरेलू मामलों में 'मान न मान मैं तेरा मेहमान' न बनिये। हर देश में घरेलू समस्यायें हैं और भारत में भी यह समस्या है पर इसका निपटारा यहां के निवासी ही कर सकते हैं।'' सभापति जी, हम अभी विधान नहीं बना रहे हैं बल्कि केवल इस बात की रूपरेखा निश्चित कर रहे हैं कि आगे हमें क्या करना है। मुझे विश्वास है कि सभा इन संकुचित पारिभाषिक झगड़ों अथवा वैधानिक बारीकियों पर माथापच्ची न करेगी। बावजूद तमाम बाधाओं और कठिनाइयों के हम अपना काम करते जायेंगे और एक संयुक्त दृढ़ महान् भारत का निर्माण करेंगे। वह महान् भारत इस देश की 40 करोड़ जनता का होगा, किसी दल विशेष, सम्प्रदाय विशेष या व्यक्ति विशेष का हर्गिज न होगा। इस भारत में सबाके समान अवसर, समान आजादी मिलेगी और सबको दर्जा समान होगा ताकि प्रत्येक नागरिक स्त्री हो या पुरुष अपनी योग्यता का पूर्ण विकास कर सके और निर्भय हो देश की सेवा कर सके।

सभापतिः अब डॉ. अम्बेडकर बोलेंगे।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (बंगाल : जनरल): सभापति महोदय, आपके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापन करता हूं कि इस प्रस्ताव पर बोलने के लिये आपने मुझे आमंत्रित किया। मैं अवश्य ही यह स्वीकार करूंगा कि आपका आमंत्रण पाकर मैं आश्चर्यित हो गया। सूची में बीस-बाईस सदस्यों का नाम मुझ से ऊपर है और इसलिए मैं समझता था कि अगर बोलने का मौका मिले भी तो कल मिलेगा। मैं पसन्द भी यही करता कि कल बोलने का मौका मिलता क्योंकि आज मैं बिना किसी तैयारी के आया हूं। मैं चाहता था कि इस अवसर पर एक विस्तृत वक्तव्य दूं और उसके लिए मैं तैयारी कर लेना चाहता था। इसके अलावा आपने वक्ताओं के लिए 10 मिनट का समय निर्धारित कर दिया है। इन सब असुविधाओं के बीच मैं नहीं समझ पाता कि प्रस्तुतः प्रस्ताव पर समुचित रूप से किस तरह बोल पाऊंगा। अस्तु, जहां तक हो सकेगा.... संक्षेप में इस पर अपना मत व्यक्त करूंगा।

सभापति जी, कल से जो बहस हो रही है उसे मद्देनजर रखते हुये इस प्रस्ताव के दो हिस्से किये जा सकते हैं। एक हिस्सा ऐसा है जिस पर कोई विवाद नहीं है और दूसरा विवादास्पद है। प्रस्ताव के उस भाग पर जिसमें 5वां और 7वां

पैरा है कोई विवाद नहीं है। इन पैरों में देश के भावी विधान के लक्ष्यों पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्ताव को पेश किया है पं. जवाहरलाल नेहरू ने जो एक समाजवादी की इस हैसियत से मशहूर है; परन्तु मैं अवश्य यह स्वीकार करूंगा कि मुझे इससे बड़ी से बड़ी निराशा हुई, यद्यपि यह विवाद-मूलक नहीं है।

मैं तो यह आशा करता था कि वह उससे कहीं आगे जायेंगे जितना कि वह प्रस्ताव के इस मार्ग में गये हैं। इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते मैं यह पसन्द करता कि यह भाग प्रस्ताव में शामिल ही न किया जाता। प्रस्ताव को पढ़ने से वह घोषणा याद आ जाती है जिसे फ्रांस की विधान-परिषद् ने मानव अधिकार घोषणा के नाम से घोषित किया था। मैं समझता हूं कि मेरा यह कहना बिलकुल दुरुस्त है कि आज 450 वर्ष बीत जाने पर भी उक्त घोषणा और उसमें दिये हुए सिद्धान्त लोगों के दिमाग में बस गये हैं। मैं तो कहूंगा कि यह दुनिया के सभ्य मुल्कों के नई रोशनी वाले आदमियों के ही दिमाग में ही नहीं घर कर गये हैं बल्कि हिन्दुस्तान जैसे मुल्क में भी, जो विचार और सामाजिक जीवन में इतना कट्टर और पुरातनवादी है शायद ही कोई ऐसा मिलेगा जो इनकी उपयोगिता न मंजूर करता हो। इन बातों को दुहराना, जैसा कि प्रस्ताव में किया गया है, केवल पाण्डित्य-प्रदर्शन करना है। यह सिद्धान्त हमारी विचारधारा या दृष्टिकोण में व्याप्त है।

अत: यह घोषित करना कि ये हमारे सिद्धांत के अंग हैं नितान्त अनावश्यक है। इस प्रस्ताव में और भी कई त्रुटियां हैं। मैं देखता हूं कि प्रस्ताव के इस भाग में यद्यपि अधिकारों की चर्चा की गई है पर उनकी सुरक्षा का कोई उपचार नहीं दिया गया है। हम सभी इस बात को जानते हैं कि अधिकारों का कोई महत्त्व नहीं यदि उनकी रक्षा की व्यवस्था न हो ताकि अधिकारों पर जब कुठाराघात हो तो लोग उनका बचाव कर सकें। ऐसे उपचारों का इस प्रस्ताव में बिलकुल अभाव है। इस सामान्य सिद्धान्त का भी इसमें उल्लेख नहीं कि किसी नागरिक के जीवन और सम्पत्ति का तब तक अपहरण नहीं किया जायेगा जब तक कि कानून खूब जांच-पड़ताल कर इसकी आज्ञा न दे दे। प्रस्ताव में उल्लिखित मौलिक अधिकारों को भी कानून और सदाचार के आधीन रख दिया गया है, निश्चय ही कानून और सदाचार क्या है इस बात का निर्णय जमाने का शासन-प्रबंध (Executive) करेगा, किसी प्रबंध का एक फैसला हो सकता है और दूसरे का दूसरा। हम निश्चय रूप से यह नहीं जानते कि इन मौलिक अधिकारों की स्थिति क्या होगी अगर ये शासन प्रबन्ध की मर्जी पर छोड़ दिये जाते हैं। प्रस्ताव में सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक, न्याय की व्यवस्था भी रखी गयी है। यदि प्रस्ताव में कोई वास्तविकता है, इसमें कोई सच्चाई है और इसकी सच्चाई पर मुझे जरा भी शक नहीं है क्योंकि उसे उपस्थित किया है माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू ने, तो मैं यह उम्मीद करता हूं कि इसमें कुछ ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिए थी जिससे राज्य के लिए यह सम्भव हो जाता है कि वह सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

न्याय प्रदान कर सकता। और इसी विचार से मैं इस बात की आशा करता कि प्रस्ताव साफ-साफ शब्दों में कहता, कि ताकि सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय प्रदान किया जा सके। देश में उद्योग-धंधों का और भूमि का राष्ट्रीयकरण किया जायेगा। मेरी समझ में नहीं आता कि जब तक देश की अर्थ-नीति समाजवादी नहीं होती किसी भी भावी हुकूमत के लिए यह कैसे सम्भव होगा कि वह सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय प्रदान कर सके। अतः यद्यपि व्यक्तिगत रूप से मुझे इन सिद्धान्तों के सन्निहित किये जाने पर कोई आपत्ति नहीं है। फिर भी प्रस्ताव मेरे लिए निराशाप्रद ही है। अस्तु इतना कह देने के बाद इस विषय को मैं यहीं समाप्त कर देता हूं।

अब मैं प्रस्ताव के पहले हिस्से पर आता हूं, जिसमें प्रथम चार पैरा शामिल हैं। सभा के वाद-विवाद को देखकर मैंने कहा था कि यह प्रसंग विवादास्पद हो गया है। सारा विवाद 'रिपब्लिक' शब्द पर केन्द्रित है। पैराग्राफ चार के इस वाक्य पर ''सारी शक्ति, सारे अधिकार जनता से प्राप्त होंगे,'' सारा विवाद है, अतः डॉक्टर जयकर ने कल जो यह बात कही कि मुस्लिम लीग की गैरहाजिरी में यह उचित न होगा कि सभा इस प्रस्ताव पर विचार करे, उसी पर सारा विवाद है। आगे चलकर इस देश में क्या विकास होगा और उसका सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक ढांचा क्या होगा इस बात को लेकर मेरे मन में जरा भी संदेह नहीं है। मैं जानता हूं कि आज हम राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक सभी दृष्टियों से विभक्त है। आज हमारा देश कई लड़ाकू दलों में बंट गया है। और मैं तो यहां तक मंजूर करूंगा कि ऐसे ही एक लड़ाकू दल के नेताओं में शायद मैं भी एक हूं। परन्तु सभापति महोदय, इन सब बातों के बावजूद भी मुझे इस बात का पक्का विश्वास है कि समय और परिस्थिति अनुकूल होने पर दुनिया की कोई भी ताकत इस मुल्क को एक होने से रोक नहीं सकती। *(हर्ष-ध्वनि)* जाति और धर्म की भिन्नता के बावजूद भी हम किसी न किसी रूप में एक होंगे, इसमें मुझे जरा भी शक नहीं है। *(हर्ष-ध्वनि)* यह कहने में मुझे रंच-मात्र भी संकोच नहीं है कि यद्यपि मुस्लिम लीग आज भारत के विभाजन के लिये भयानक आंदोलन कर रही है पर एक-न-एक दिन स्वयं मुसलमानों में बुद्धि आयेगी और वे समझने लगेंगे कि उनके लिए भी संयुक्त भारत ही अधिक कल्याणकर है। *(तुमुल-ध्वनि)*

इसलिए जहां तक हमारे लक्ष्य का सम्बन्ध है, हममें से किसी को भी कोई आशंका नहीं होनी चाहिए कोई संदेह न होना चाहिए। हमारी कठिनाई यह नहीं है कि हमारा भविष्य क्या होगा? हमारी कठिनाई तो यह है कि अपनी आज की इस विशाल, पर बेमेल आबादी को किस तरह इस बात पर आमादा करें कि वह मिल-जुलकर एक फैसला करें और ऐसा पथ ग्रहण करें कि हम सब एक हो जायें। हमारी कठिनाई इति को लेकर नहीं अथ को लेकर है। हमारा लक्ष्य

क्या है, यह तो साफ है। पर परेशानी यह है कि काम शुरू कैसे करें। इसलिए सभापति महोदय, मैं तो समझता हूं कि सभी को रजामंद करने के लिए, हमारे देश के प्रत्येक वर्ग को इस बात पर आमादा करने के लिए कि हम सब एक राह पर चलें, बहुमत वाले दल की यह बड़ी से बड़ी राजनीतिज्ञता होगी कि वह उन लोगों की बद्धमूल और गलत धारणा को दूर करने के लिए कुछ रियायतें दे दें जो आज हमारे साथ चलने में दुविधा बोध कर रहे हैं। इसी भावना से प्रेरित होकर मैं यह अलाप कर रहा हूं। हम ऐसे नारे लगाने बन्द कर दें जिनसे लोगों को भय होता हो। अपने विरोधियों की बद्धमूल धारणा को, पक्षपातपूर्ण ध ारणा को दूर करने के लिए उन्हें कुछ रियायतें दें, ताकि वह स्वेच्छा से हमारे साथ उस पथ पर चलें जिस पर कुछ दूर चलने के बाद हम अपनी एकता की मंजिल पर पहुँच जायेंगे। अगर मैं यहां डॉक्टर जयकर के संशोधन का समर्थन कर रहा हूं तो केवल इसी उद्देश्य से कि हम सभी यह समझें कि यह कानूनी प्रश्न नहीं है। हम सही हैं या गलत, जो रास्ता हम ग्रहण कर रहे हैं वह हमारे कानूनी अधिकारों से संगत हैं या नहीं, वह 16 मई या 6 दिसम्बर के वक्तव्य के अनुकूल है या नहीं, इन सब बातों को छोड़ दीजिये। हमारी समस्या इतनी गहन है कि कानूनी अधिकारों से उसका समाधान न होगा। यह कानूनी समस्या है ही नहीं। हमें कानूनी ख्याल को छोड़कर कुछ ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे वे लोग जो नहीं शामिल हैं, शामिल हो जायें। हम उनका यहां आना संभव बनायें, यही मेरी प्रार्थना है।

बहस-मुबाहिसे के दौरान में दो ऐसे प्रश्न उठाये गये थे जो मुझे इतने खटके कि मैंने उन्हें कागज पर नोट कर लिया है। एक प्रश्न मेरा ख्याल है, कि मेरे मित्र बिहार के प्रधानमंत्री ने उठाया था जिन्होंने कल सभा में वक्तृता दी थी। आपने कहा था भला यह प्रस्ताव मुस्लिम-लीग को विधान-परिषद् में सम्मिलित होने से कैसे रोक सकता है? आज मेरे मित्र डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने एक दूसरा प्रश्न उपस्थित किया कि क्या यह प्रस्ताव मंत्रिप्रतिनिधिमंडल की योजना के विपरीत है? मैं समझता हूं कि ये बड़े गंभीर प्रश्न हैं और इनका उत्तर और स्पष्ट उत्तर आवश्यक है। यह प्रस्ताव चाहे खूब सोच-समझ कर शान्त चित्त से प्रस्तुत किया गया हो या केवल संयोगवशात बन गया हो, पर मैं तो यही मानता हूं कि इसका यह परिणाम होगा कि मुस्लिम लीग बाहर ही रह जायेगी, भले ही यह प्रस्ताव इस परिणाम के अभिप्राय से न बनाया गया हो। इस सम्बन्ध में मैं आपका ध्यान प्रस्ताव के पैरा 3 की ओर आकृष्ट करूंगा जो मेरी समझ में बहुत महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है। इस पैरा में भारत के भावी विधान की तस्वीर है। मैं नहीं जानता कि प्रस्तावक महोदय का क्या अभिप्राय है। पर मैं मानता हूं कि पास हो जाने पर विधान-परिषद् के लिए यह प्रस्ताव एक तरह से आदेश-मूलक हो जायेगा कि वह इसके पैरा 3 के अनुसार ही विधान बनाये। पैरा 3 क्या कहता है? यह कहता है कि इस देश में दो भिन्न-भिन्न राज्य पद्धतियां होंगी एक तो उन खुद मुख्तार प्रान्तों, रियासतों या अन्य प्रदेशों के लिए जो भारतीय संघ में शामिल होना

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

चाहते हैं। इन खुद मुख्तार प्रदेशों को सारे अधिकार प्राप्त होंगे। इन्हें अवशिष्ट अधिकार भी प्राप्त रहेंगे। उन खुद मुख्तार प्रदेशों के ऊपर एक संघ सरकार होगी जिसके अधिकार में कुछ विषय होंगे, जिन पर कानून बनाने का, शासन चलाने का संघ सरकार को ही अधिकार होगा। प्रस्ताव के इस हिस्से में गुटबन्दी का कहीं जिक्र नहीं है। यह गुट संघ सरकार और घटकों के बीच एक मध्यवर्ती संगठन है। कैबिनेट मिशन के वक्तव्य को दृष्टि में रखते हुए या कांग्रेस के वर्धा वाले प्रस्ताव को भी देखते हुए मैं स्वीकार करता हूं कि स्वयं मुझे बड़ा आश्चर्य है कि प्रस्ताव में गुटबन्दी की कल्पना का कहीं जिक्र भी नहीं है। व्यक्तिगत रूप से मैं प्रान्तों की गुटबंदी के विचार को नहीं पसन्द करता। *(हर्ष-ध्वनि)* मैं एक दृढ़ और संयुक्त-केन्द्र चाहता हूं उससे भी ज्यादा मजबूत केन्द्र जो सन् 1935 के एक्ट के मुताबिक बना है। *(हर्ष-ध्वनि)* पर सभापति महोदय, इन इच्छाओं का, रायों का स्थिति पर कोई असर नहीं पड़ने का। हम बहुत आगे बढ़ चुके हैं। मैं तो कहूंगा कि कांग्रेस स्वयं दृढ़ केन्द्र को विघटित करने पर राजी हो गई, ऐसे दृढ़ केन्द्र को विघटित करने पर जो 150 वर्षों के लंबे शासन के बाद बना था और जो, मैं कह सकता हूं कि मेरे लिए एक प्रशंसा, सम्मान और कल्याण की चीज थी। पर जब हमने उस स्थिति को त्याग दिया है, जब हमने स्वयं स्वीकार कर किया है कि हम मजबूत केन्द्र नहीं चाहते, जब हमने मंजूर कर लिया है कि संघ सरकार और प्रान्तों के बीच उपसंघ की-सी एक मध्यवर्ती राज्य पद्धति होनी चाहिए, तो मैं जानना चाहता हूं कि प्रस्ताव के पैरा 3 में गुटबन्दी का जिक्र क्यों नहीं किया गया है? मैं जानता हूं कि कांग्रेस, मुस्लिम लीग और सम्राट की सरकार तीनों ही योजना की गुटबन्दी सम्बन्धी धारा के अर्थ पर मतभेद रखते हैं। परन्तु मैं तो हमेशा से यही समझता हूं कि कांग्रेस ने यह मंजूर कर लिया है कि यदि भिन्न-भिन्न गुटों के प्रान्त अपना उपसंघ बनाने पर राजी हों तो कांग्रेस को इस व्यवस्था पर कोई आपत्ति नहीं है। अगर कोई मुझे बता दे कि मेरा ऐसा समझना गलत है तो मैं अपनी भूल स्वीकार कर लूंगा। मेरा विश्वास है कि कांग्रेस दल की विचारधारा समझने में मैं सही हूं। मैं यह पूछना चाहता हूं कि प्रस्तावक और उनके दल ने जिस बिनां पर प्रान्तों की गुटबन्दी या उनके उपसंघ बनाने की कल्पना को स्वीकार किया था उसका उस प्रस्ताव में आखिर प्रस्तावक ने हवाला क्यों नहीं दिया है? इस प्रस्ताव में मध्यवर्ती संघ का जिक्र दूर ही क्यों रखा गया है? मुझे कोई भी उत्तर नहीं मिलता है। इसलिए बिहार के प्रधानमंत्री ने और डॉ. श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने जो सभा से प्रश्न किया है कि भला यह प्रस्ताव 16 मई के वक्तव्य के विपरीत कैसे है और यह लीग को विधाान-परिषद् में आने से कैसे रोकता है, उसके उत्तर में मैं कहूंगा कि आपके इस प्रस्ताव के तीसरे पैरे से मुस्लिम लीग अवश्य लाभ उठायेगी और अपनी अनुपस्थिति का औचित्य दिखायेगी। सभापति जी, कल मेरे मित्र डॉ. जयकर ने इस प्रश्न पर बहस मुल्तवी

रखने के लिए अपने पक्ष का प्रतिपादन कुछ कानूनी ढंग पर किया उनकी दलील का यह आधार था कि आयां हमें इस प्रस्ताव को पास करने का अधिकार भी है। उन्होंने मंत्रिप्रतिनिधिमंडल के वक्तव्य का कुछ भाग पढ़कर सुनाया जो इस परिषद् की कार्य-विधि से सम्बन्ध रखता है। उनका मन्तव्य यह था कि इस प्रस्ताव पर तुरन्त निर्णय करने की जो पद्धति परिषद् अपना रही है वह योजना में दी हुई पद्धति के प्रतिकूल है। मैं इस बात को दूसरी तरह से सभा के सामने रखना चाहता हूं। मैं आपसे यह नहीं पूछना चाहता कि आपको यह प्रस्ताव जल्दीबाजी में पास कर देने का हक है या नहीं। हो सकता है कि आपको यह अधिकार हो। पर जो बात मैं आपसे पूछना चाहता हूं, वह यह है कि क्या इस प्रस्ताव को पास करना आपके लिए बुद्धिमानी और नीतिज्ञता की बात होगी? अधिकार एक बात है और बुद्धिमत्ता दूसरी। मैं चाहता हूं कि सभा इस बात पर दूसरे ही दृष्टिकोण से विचार करे। वह इस दृष्टिकोण से इस पर विचार न करे कि उसे इस प्रस्ताव को पास करने का हक है या नहीं। वरन् इस ख्याल से कि क्या इसे अभी पास करना बुद्धि-संगत होगा, नीतिज्ञता की बात होगी? मेरा कहना है कि ऐसा करना बुद्धिमत्ता और नीतिज्ञता से विपरीत है। मेरा सुझाव है कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग के झगड़े को सुलझाने के लिए एक और प्रयास करना चाहिए। यह मामला इतना संगीन है, इतना महत्त्वपूर्ण है कि इसका फैसला एक या दूसरे दल की प्रतिष्ठा के ख्याल से ही नहीं किया जा सकता। यहां राष्ट्र के भाग्य का फैसला करने का प्रश्न हो, वहां नेताओं, दलों तथा सम्प्रदायों की शान का कोई मूल्य नहीं होना चाहिए। वहां तो राष्ट्र के भाग्य को ही सर्वोपरि रखना चाहिए। मैं केवल इस बिनां पर ही डॉ. जयकर के संशोधन का समर्थन नहीं कर रहा हूं कि इससे विधान-परिषद् सुसंगठित रूप से अपना काम करेगी और कार्यारम्भ के पहले मुस्लिम लीग की प्रतिक्रिया को जान लेगी, बल्कि इसलिए भी कि हमें यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि अगर हम जल्दीबाजी से काम लेंगे तो हमारे भविष्य का क्या फैसला होगा। मुझे नहीं मालूम कि कांग्रेस के दिमाग में, जिसका इस सभा में प्रबल बहुमत है, क्या नक्शा है। मुझमें यह दैवी शक्ति नहीं है कि इस बात को जान जाऊं कि वे क्या सोच रहे हैं? उनकी युक्ति और युद्ध-कौशल क्या है इसे मैं नहीं जानता। परन्तु इस उपस्थित मसले पर बहैसियत एक बाहरी आदमी के जब मैं अपना दिमाग लगाता हूं तो मुझे तीन ही रास्ते दिखाई देते हैं, जिनसे हम अपने भविष्य का निर्णय कर सकें। एक रास्ता तो यह है कि एक दल दूसरे दल की इच्छा के सामने आत्म-समर्पण कर दे। दूसरा रास्ता यह है कि हम आपस में विचार-विनिमय कर समझौता कर लें और तीसरा रास्ता है कि खुलकर लड़ाई की जाये। सभापति जी, परिषद् के कुछ सदस्यों की ओर से मैं यह भी सुनता आ रहा हूं कि वे युद्ध के लिए तैयार हैं। मैं अवश्य यह स्वीकार करूंगा। मैं इस कल्पना से ही कांप उठता हूं कि इस देश का कोई भी व्यक्ति यह सोचे कि युद्ध द्वारा वह देश की राजनैतिक समस्या हल कर लेगा। मुझे नहीं मालूम कि देश के कितने लोग इस विचार का समर्थन करते हैं। बहुत से लोग इस विचार का समर्थन करते हैं और मेरी समझ में बहुत से लोग तो इसलिए समर्थन करते हैं कि उनका विश्वास है कि उनका यह युद्ध अंग्रेजों के साथ होगा। अगर यह युद्ध जो लोगों के दिमाग में है, परिमित दायरे में होता और

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

सिर्फ अंग्रेजों तक ही सीमित रहता तो मुझे इस कौशल पर, इस युक्ति पर कोई आपत्ति न होती। परंतु क्या आप समझते हैं कि यह युद्ध सिर्फ अंग्रेजों के ही विरुद्ध होगा? मुझे यह कहने में रंचमात्र भी दुविधा नहीं है और सभा के सामने मैं साफ शब्दों में कहना चाहता हूं कि अगर देश में युद्ध हुआ और उसका सम्बन्ध हमारी आज की समस्या से रहा तो फिर यह युद्ध अंग्रेजों के साथ न होगा, यह होगा मुसलमानों के साथ। बल्कि यह उससे भी बुरा होगा और यह युद्ध होगा मुसलमानों और अंग्रेजों की सम्मिलित शक्ति के साथ। मैं नहीं समझ पाता कि यह सम्भावित युद्ध किस तरह उससे भिन्न होगा, जिसकी विभीषिका की कल्पना मैंने की है। महामना ब्रूक की उस प्रसिद्ध वक्तृता का एक अंश मैं सभा को पढ़कर सुना देना चाहता हूं जो उन्होंने पार्लियामेंट में अमेरिका से मेल-मिलाप करने के सम्बन्ध में दी थी। मेरा विश्वास है कि शायद सभा के उद्देश्य पर इसका कुछ असर पड़ सकता है। आप जानते हैं कि अंग्रेज अमेरिका के विद्रोही उपनिवेशों को जीत कर उनकी मर्जी के खिलाफ उन्हें अपने आधीन रखने की कोशिश कर रहे थे। उन उपनिवेशों को जीतने का विचार परित्याग करने के सम्बन्ध में ब्रूक ने यों कहा था:

> ''सभापति महोदय, प्रथम तो मुझे यह कहने की अनुमति दें कि केवल बल प्रयोग कभी स्थायी नहीं होता। उससे कुछ देर के लिए किसी को दबाया जा सकता है पर उससे पुन: दबाने की आवश्यकता दूर नहीं की जा सकती। उस जाति पर कभी शासन नहीं किया जा सकता जिसे हमेशा ही जीतने की जरूरत पड़े।''
>
> ''मेरी दूसरी आपत्ति यह है कि बल-प्रयोग का परिणाम अनिश्चित होता है। बल प्रयोग से सदा आतंक ही नहीं पैदा होता। अगर हम सदा शस्त्र ही उठाये रहें तो फिर यह विजय कैसी? बलप्रयोग में अगर आप असफल होते हैं तो फिर कोई साधन आपके पास नहीं रह जाता। अगर आप मीठे तरीके से सुलह करने में असफल होते हैं तो बल प्रयोग का साधन आपके हाथ में रहता है पर बलप्रयोग में अगर आप हारे तो फिर समझौते की कोई और गुंजाइश नहीं रहती। दया दिखाने से अधिकार और शक्ति तो कभी-कभी प्राप्त हो जाते हैं पर बल प्रयोग में पराजित होने पर आप अधिकार की भीख नहीं मांग सकते।''
>
> ''बल प्रयोग के विरुद्ध मेरी और आपत्ति यह है कि इसके द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के प्रयास में आप अपने लक्ष्य को ही क्षीण और दुर्बल बना देते हैं। बल प्रयोग में विजयी होने पर आपको क्या मिलता है? जो भी आप पाते हैं, वह युद्ध के सिलसिले में प्राय: मूल्यहीन, जर्जरित और बर्बाद हो चुका रहता है। निश्चय ही आप से पाने के लिए युद्ध नहीं करते हैं।''

यह मेरी गम्भीर चेतावनी है और इसकी उपेक्षा करना खतरनाक होगा। अगर किसी के दिमाग में यह ख्याल हो कि बल-प्रयोग द्वारा, युद्ध द्वारा, क्योंकि बल-प्रयोग

ही युद्ध है.....हिंदू-मुस्लिम समस्या का समाधान किया जाये ताकि मुसलमानों को दबाकर उनसे वह विधान मनवा लिया जाये जो उनकी रजामंदी से नहीं बना है, तो इससे देश ऐसी स्थिति में फंस जायेगा कि उसे मुसलमानों को जीतने में सदा लगा रहना पड़ेगा। एक बार जीतने से ही जीत का काम समाप्त न हो जायेगा। मैं आपका और अधिक समय नहीं लेना चाहता। पुनः एक बार वर्क के कथन का हवाला देकर मैं अपना भाषण समाप्त कर देता हूं। वर्क ने कहीं पर कहा है कि ''शक्ति देना तो आसान है पर बुद्धि देना कठिन है।'' आइये, हम अपने आचरण से यह प्रमाणित कर दें कि अगर इस परिषद् ने सर्वोच्च सत्ता जबर्दस्ती अन्यायपूर्वक ले ली है तो वह उस सत्ता का प्रयोग बुद्धिमानी से करेगी। यही एक मात्र रास्ता है जिसके जरिये हम देश के सभी वर्गों को साथ लेकर चल सकते हैं। और कोई मार्ग नहीं है जिस पर चलकर हम एकता पा सकें। इस बात के सम्बन्ध में हम लोगों को कोई सन्देह न होना चाहिए।

सरदार उज्जवल सिंह (पंजाब : सिख): सभापति महोदय, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करने के लिए खड़ा हुआ हूं। जिसे पं. जवाहरलाल नेहरू ने बड़ी योग्यता और वाक्पटुता के साथ उपस्थित किया था। यह प्रस्ताव उन लक्ष्यों को हमारे सामने रखता है। निश्चय ही भारतीय इतिहास में यह अवसर बड़ा ही पवित्र और अद्वितीय है कि इस देश के चुने हुए व्यक्ति एक स्वतंत्रता पत्र तैयार करने के लिए और देश-शासन की योजना बनाने के लिए समवेत हुए हैं। इसलिए पेश्तर इसके कि हम अपना काम शुरू करें, यह आवश्यक है कि इस देश की करोड़ों मूक जनता को और बाहरी दुनिया को, जिसकी निगाह आज हम पर है, हम आशा और प्रसन्नता का संदेश देवें। मेरा विश्वास है कि प्रस्तुत प्रस्ताव से देश के दलित और मूक जनसमूह को, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए आज मुद्दत से संग्राम करता आ रहा है, इस बात की एक नवीन आशा प्राप्त होगी कि उसका चिरवांछित स्वप्न शीघ्र ही पूरा होने जा रहा है। और बातों की तरह स्वतंत्रता-संग्राम में वही होता है, जैसा इतिहास में होता आया है। यह हमारा ही देश नहीं है, जिसे आजादी के लिये इतना लंबा और कड़ा संघर्ष करना पड़ा है। स्वतंत्रता की देवी हर व्यक्ति से अपना समुचित बलिदान लेगी। हां यह बात जरूर है कि संग्राम हिंसात्मक होता है और सभी जगह संग्राम में हिंसा हुई, पर हमारा संग्राम अहिंसात्मक रहा है। इस नवीन संग्राम-शैली के लिए तथा और बहुत-सी बातों के लिए जिनका यह देश हामी है और जिन्हें निकट भविष्य में पाने की आशा रखता है, हम कृतज्ञ हैं। महात्मा गांधी के, उस अपूर्व कुशल कारीगर के जिसे पं. जवाहरलाल नेहरू ने भारतीय राष्ट्र का जनक बताया है।

यह विधान-परिषद् हमारे स्वतंत्रता-संग्राम की चरम सीमा या आखिरी मंजिल है। यह प्रस्ताव देश की करोड़ों जनता की दबी हुई भावना को व्यक्त करता है।

[सरदार उज्जवल सिंह]

प्रस्ताव के तीन भाग किये जा सकते हैं। पहले भाग में स्वतंत्रता सर्वसत्ता सम्पन्न भारतीय प्रजातंत्र के घोषित किये जाने की बात है। दूसरे भाग में खुद-मुख्तार या स्वायत्त शासन प्राप्त प्रदेशों घटकों की, जिनमें देशी रियासतें भी शामिल हैं, चर्चा की गई है। जो संघ में रहेंगे और जिन्हें अवशिष्ट अधिकार प्राप्त रहेंगे तीसरे भाग में कहा गया है कि सबको सामाजिक, आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होगी, सबको समान न्याय प्राप्त होगा और अल्पसंख्यकों को, दलित जातियों को तथा कबायली क्षेत्रों को पर्याप्त संरक्षण प्राप्त होंगे। हो सकता है कि प्रस्ताव की वाक्य-रचना को लेकर अथवा कहीं-कहीं इसके बहुत संक्षिप्त होने पर कुछ मतभेद हो; पर कुल मिलाकर प्रस्ताव भारतीय जनता की इच्छा की अभिव्यक्ति है।

सभापति महोदय, माननीय मित्र डॉ. जयकर के लिए मेरे दिल में बड़ी श्रद्धा है। आपने यह आपत्ति की है कि प्रस्ताव पर सभा में इस समय विचार न किया जाये, यह आपत्ति इस बिनां पर की गयी है कि योजना के अनुसार हम इस प्रारम्भिक अधिवेशन में केवल उन्हीं बातों पर विचार कर सकते हैं, जिनका उल्लेख मंत्रिप्रतिनिधिमंडल के 19वें पैरे में आया है। और बातों पर नहीं। आपने यह भी सुझाव दिया है कि अच्छा होगा कि सभा इस प्रस्ताव पर 20 जनवरी को विचार करे जब बड़े दिनों के लिए स्थगित रहने के पश्चात् सभा पुनः बैठे। मेरे माननीय मित्र शायद यह जानते होंगे कि बाकी काम को पूरा करने के लिए 20 जनवरी को जो बैठक होगी वह भी प्रारम्भिक बैठक ही रहेगी। और इस हालत में उनकी यह आपत्ति कि इस प्रस्ताव पर इस प्रारंभिक बैठक में विचार स्थगित रखा जाये, उस दिन 20 जनवरी की बैठक में भी लागू रहेगा जैसे आज है। *(खूब खूब)*

आपका दूसरा सुझाव यह है कि इस प्रस्ताव पर विचार कुछ हफ्तों के लिए हम लोग स्थगित कर दें, ताकि मुस्लिम लीग और रियासतों को इस मामले में अपना मत व्यक्त करने का अवसर मिल सके। औरों की तरह मुझे भी मुस्लिम लीग की अनुपस्थिति पर खेद है और मैं भी लीग के सहयोग को कीमती समझता हूं और उसे पाना चाहता हूं। पर वे मित्र अनुपस्थित हैं, इसमें इस सभा का कोई दोष नहीं है। वे कब आयेंगे, इसकी भी हमें कोई जानकारी नहीं है। इस हालत में यह उचित नहीं है कि सभा समवेत होने के बाद बिना किसी जानकारी के वे लोग कब आयेंगे, अनिश्चित काल तक इंतजार करती रहे। जहां तक रियासतों के शामिल होने की बात है, योजना पढ़ने से मेरे मित्र को स्पष्ट हो जायेगा कि रियासतें अन्त में परिषद् में आयेंगी। जब प्रान्तीय विधान तैयार कर लेने पर संघ का विधान बनाने के लिए हम सब बैठेंगे। फिर क्या हम उस तरह के महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव को तब तक के लिए स्थगित रख दें, जब कि विधान-निर्माण का बहुत कुछ हमारा काम समाप्त हो चुका होगा? इस प्रस्ताव पर तो कार्यारम्भ में ही विचार कर हमें इसे स्वीकार करना चाहिए।

प्रस्ताव पर दूसरी आपत्ति है डॉ. अम्बेडकर की कि इसमें गुटबन्दी (Grouping) शब्द का जिक्र नहीं आया है। डॉ. अम्बेडकर को मालूम होना चाहिए कि गुटबंदी अनिवार्य नहीं है। यह ऐच्छिक है और मैं तो कहूंगा कि प्राय: हम सभी इसके खिलाफ हैं। योजना में भी यह सेक्शनों या प्रान्तों की इच्छा पर छोड़ा गया है। इस तरह के प्रस्ताव में प्रस्तावक कोई ऐसी बात नहीं रख सकते थे जिस पर सेक्शन या प्रान्त कोई अन्यथा निर्णय करें।

देशी रियासतों को प्रस्ताव में रिपब्लिकन या लोकतंत्र शब्द के रखने पर आपत्ति हो सकती है। रियासतें राजतंत्रीय शासन-पद्धति की आदी हो गई हैं। और उनको इस प्रश्न पर हो सकता है कि कुछ आशंका हो। परन्तु पं. जवाहरलाल नेहरू के भाषण को देखते हुए उनकी यह आशंका असंगत है। भारतीय प्रजातंत्र में रियासतों के लोग अगर पसंद करें तो अपने प्रदेश में राजतंत्रीय पद्धति रख सकते हैं।

सभापति जी, मेरा विश्वास है कि इस विधान-परिषद् के परिश्रम के फलस्वरूप जो योजना तैयार होगी, वह ऐसी होगी जो भारत के सभी सम्प्रदायों को, सभी वर्गों को मान्य होगी और देश की विचित्र स्थिति और उसकी योग्यता के अनुकूल होगी।

प्रस्ताव के दूसरे भाग में संघ और घटकों (प्रदेशों) वे बारे में विचार किया गया है और अवशिष्ट अधिकार घटकों को दिये गये हैं। हममें से कुछ लोगों को घटकों को अवशिष्ट अधिकार दिये जाने पर एतराज हो सकता है। पर यह व्यवस्था मंत्रिप्रतिनिधिमंडल की योजना के बिलकुल अनुरूप है और योजना के 15वें पैराग्राफ का आवश्यक अंग है। हममें से बहुतों के लिए यह एक कड़वा घूंट है पर इसे तो निगलना ही पड़ेगा।

प्रस्ताव का तीसरा भाग अल्पसंख्यकों को और पिछड़ी हुई जातियों को यह आश्वासन देता है कि उनके स्वार्थ पर्याप्त रूप से संरक्षित रहेंगे। इस सम्बन्ध में मेरा सम्प्रदाय यह समझता है कि सिक्खों को और अन्य अल्पसंख्यकों को जो संरक्षण दिये जायें वे न केवल पर्याप्त ही हों, बल्कि संतोषपूर्ण हों। सभापति जी, आपकी अनुमति हो तो मैं सभा को उस आश्वासन से अवगत करा दूं जो कि दिसम्बर 1929 में राष्ट्रीय महासभा के लाहौर के अधिवेशन में कांग्रेस के एक प्रस्ताव द्वारा सिखों को प्राप्त हुआ था। प्रस्ताव का वह प्रासंगिक भाग जो सिखों और अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में था, यों है:

> ''भारत के किसी भावी विधान में इस समस्या का (साम्प्रदायिक समस्या का) कोई भी ऐसा समाधान कांग्रेस को मान्य न होगा जिससे मुसलमानों को, सिखों को तथा अन्य अल्पसंख्यकों को पूरा संतोष न प्राप्त होता हो।''

जब से यह प्रस्ताव पास हुआ है सिखों ने देश की आजादी को लक्ष्य बना लिया है। और कांग्रेस के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर स्वतंत्रता संग्राम में हमेशा

[सरदार उज्जवल सिंह]

मोर्चा लिया है। दुर्भाग्य से ब्रिटिश मिशन ने यहां आकर जो योजना पेश की यानी 16 मई का जो वक्तव्य दिया, उसमें यह मंजूर करके भी कि सिख भी भारत के तीन प्रमुख सम्प्रदायों में शामिल हैं वह सिखों को संरक्षण न दे सके। मुसलमानों के सम्बन्ध में तो मिशन ने यह कहा कि एकात्मक भारत में जहां हिंदुओं को प्राधान्य होगा, मुसलमानों की संस्कृति और उनके सामाजिक और राजनैतिक जीवन के लुप्त हो जाने की, हिंदुओं में जज्ब हो जाने की वास्तविक आशंका है। परन्तु मिशन यह न समझ सका कि मुस्लिम बहुमत के अन्दर यही संकट सिखों पर पंजाब में है जो उनका पवित्र तीर्थ और जन्म स्थान है। यह तो कैबिनेट मिशन का बहुत बड़ा अन्याय था कि सेक्शन बी में पंजाब में उन्होंने सिखों को वही संरक्षण नहीं दिये जो उन्होंने सिंध में मुसलमानों को दिये। अभी उस दिन पार्लियामेंट में बोलते हुए सर स्टेफोर्ड क्रिप्स ने कहा था कि पंजाब में और सेक्शन बी में वे सिखों को वे अधिकार नहीं दे सकते जो उन्होंने मुसलमानों को सिन्ध में दिये हैं क्योंकि इस हालत में और अल्पसंख्यकों को भी इसी तरह के अधिकार देने होंगे। क्या मैं कैबिनेट मिशन से पूछ सकता हूं कि केन्द्र में मुसलमानों को ये अधिकार देते समय क्या उन्होंने अन्य अल्पसंख्यकों का भी ख्याल किया था? सिखों को यद्यपि उन्होंने भारत का एक प्रमुख सम्प्रदाय माना पर उनका ख्याल नहीं किया। पर मैं समझता हूं कि केन्द्र में संरक्षण पाने का जो हक मुसलमानों का है, उससे भी ज्यादा मजबूत हक सिखों का है, पंजाब में संरक्षण पाने का। मैं यह भी समझता हूं और विश्वास करता हूं कि अगर सेक्शन बी में और पंजाब में सिखों को कोई संरक्षण मिला तो इससे वहां के अन्य अल्पसंख्यकों के अधिकार भी सुरक्षित रहेंगे। चूंकि मिशन ने सिखों के लिए संरक्षण की कोई व्यवस्था नहीं की। सारे सिख सम्प्रदाय में असंतोष और क्षोभ की एक लहर फैल गई और उनका क्षोभ चरम सीमा तक पहुंच गया। अपने पवित्र तीर्थ स्थान अमृतसर में एक विशेष सभा में सिखों ने यह प्रस्ताव पास किया कि सिख विधान-परिषद् का बायकाट कर दें, उन्होंने विधान-परिषद् का बायकाट किया परन्तु कांग्रेस ने मिशन की योजना को स्वीकार किया और प्रमुख कांग्रेसी नेताओं ने सिखों से अपील की कि वे भी उसे मंजूर कर लें। अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी की मुंबई की बैठक में सरदार पटेल ने सिख हितों की बहुत वकालत की। हम सब उनके आभारी हैं। गत 18 जुलाई को हाउस ऑफ लार्ड्स में बहस के दौरान में बोलते हुए भारत-मंत्री ने इन शब्दों में सिखों की ओर महत्त्वपूर्ण संकेत किया था।

फिर भी यह आवश्यक है कि इनके हकों का पूरा ख्याल किया जाये। उन पर विचार किया जाये। क्योंकि उनका सम्प्रदाय एक महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय है। पर जनगणना या आबादी के आधार पर उनके रियायती अधिकार खत्म हो जाते हैं। हमें आशा है कि 16 मई के वक्तव्य के पैरा 20 के अनुसार अल्पसंख्यकों के लिए जो 'एडवाइजरी कमेटी बनायी जायेगी, उसमें सिखों को पूरा प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा और इस तरह इस स्थिति का बहुत कुछ प्रतिकार हो जायेगा।'

आपने यह भी कहा:

> ''इसके अलावा हमने दोनों प्रमुख दलों से जो इस मामले में हर तरह सुझाव ग्रहण करने के लिए तैयार थे, यह कहा है कि पंजाब में या पच्छिमोत्तर गुट में सिखों की स्थिति दृढ़ बनाने के लिए कोई विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए।''

यह आश्वासन यद्यपि कई बातों में संतोषजनक था फिर भी इतना संतोषपूर्ण नहीं था कि सिख विधान-परिषद् के प्रति अपना रुख बदल दें। उसके बाद कांग्रेस की कार्यसमिति ने 9 अगस्त को एक प्रस्ताव पास कर सिखों से अपील की कि वे अपनी स्थिति पर पुन: विचार करें। प्रस्ताव में कहा गया था कि:

> ''कार्यसमिति जानती है कि सिखों के साथ अन्याय हुआ है और इसने इस बात की ओर कैबिनेट मिशन का ध्यान आकृष्ट किया है, फिर भी हमारी यह दृढ़ राय है कि सिख अपने हितों को तथा देश की स्वतंत्रता को परिषद् में शामिल होकर जितना लाभ पहुंचा सकते हैं, उतना परिषद् से बाहर रह कर नहीं। इसलिए समिति सिखों से अपील करती है कि वे अपने फैसले पर फिर विचार करें और विधान-परिषद् में सम्मिलित होने की सम्मति व्यक्त करें। कार्यसमिति सिखों को विश्वास दिलाती है कि उनकी जायज शिकायतों को दूर कराने में तथा उन्हें पर्याप्त संरक्षण दिलाने में वह उनको प्रत्येक सम्भव सहयोग देगी।''

सिखों ने 14 अगस्त को सारी स्थिति पर विचार किया। कांग्रेस कार्य समिति का प्रस्ताव उनके लिए बहुत वजन रखता था और इसी प्रस्ताव के कारण पंथिक बोर्ड ने अपनी विशेष बैठक में यह फैसला किया कि परिषद् में सम्मिलित होने पर जो प्रतिबंध लगाया गया है, वह हटा लिया जाये। पंथिक बोर्ड ने एक प्रस्ताव द्वारा तय किया कि सिखों के लिए उसी तरह के संरक्षण प्राप्त करने के लिए जैसा कि मुसलमानों को सिंध में प्राप्त हैं, परिषद् में शामिल होकर एक बार परीक्षा ली जाये। पंथिक बोर्ड के इस आदेश के अनुसार सिख यहां आये हैं। मुझे कांग्रेस नेताओं पर बड़ा विश्वास है और हृदय से आशा करता हूं कि सिखों को जो आश्वासन दिये गये थे वे बिना विलम्ब पूरे किये जायेंगे। क्योंकि उनको कार्यान्वित करने का समय अब आ गया है।

मुझे खेद है कि मैंने सिखों की स्थिति का विस्तारपूर्वक वर्णन कर सभा का समय लिया। पर सिखों के मामले से सभा को अवगत करा देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता था। फिर भी मैं इस बात को साफ कर देना चाहता हूं कि पंजाब और पच्छिमोत्तर गुट में अपनी स्थिति को मजबूत बनाने के लिए सिख जो संरक्षण मांगते हैं, वे भारतीय प्रजातंत्र के अन्दर हैं बाहर नहीं। वे इस बात के लिए चिन्तित हैं कि सभी सम्प्रदाय शांतिपूर्वक आपस में मिल-जुलकर रहें। पंजाब और पच्छिमोत्तर गुट में अपने मुसलमान भाइयों के साथ सुखपूर्वक रहने के लिए हम तैयार हैं, यहां तक कि मुसलमानों को अपना बड़ा भाई मानकर रहने के लिए तैयार हैं।

[सरदार उज्जवल सिंह]

पर अपने से ऊंची और शासक जाति मान कर या एक पृथक् जाति मानकर हरगिज नहीं। इसलिए सिख इस महान् और प्राचीन देश के विभाजन के लिए तैयार नहीं हैं। वे पाकिस्तान की स्थापना का अथवा और सारे उद्देश्यों का घोर विरोध करेंगे।

सभापति जी, मुझे यह कहने की अनुमति दें कि सिखों के दिल में स्वतंत्रता की एक तीव्र लालसा है। भारतीय इतिहास में किसी भी अकेले सम्प्रदाय ने इतना कठोर और दीर्घकालीन संग्राम नहीं किया है, जितना कि सिखों ने इस देश से विदेशी लुटेरों को मार भगाने के लिए किया है। आधुनिक युग में स्वतंत्रता संग्राम में उनकी कुर्बानियां किसी से कम नहीं हैं। आजादी की लड़ाई में अथक परिश्रम और उत्साह से वे कांग्रेस के साथ सदा मोर्चे पर डटे रहेंगे। *(हर्ष-ध्वनि)* परन्तु वे चाहते हैं कि उनका पृथक् अस्तित्व और स्थिति कायम रहे और मजबूत रहे ताकि देश-सेवा में अपना पूरा हिस्सा बंटा सकें।

मैं समझता हूं कि वह काम बहुत ही गहन है, अति विशाल है, जिसे पूरा करने का भार इस महती परिषद् ने लिया है। हमारे मार्ग में बाधाएं और कठिनाइयां हैं पर मेरा यह पक्का विश्वास है कि हम सारी बाधाओं को पार कर जायेंगे, सारी कठिनाइयों पर विजय पायेंगे। अगर हम खूब सावधानी से सोच-विचार कर चलें और जरूरत आने पर दृढ़ता से मुकाबला करें; इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं। *(हर्ष-ध्वनि)*

सेठ गोविन्ददास (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): सभापति महोदय, इतने अंग्रेजी भाषणों के बाद, चाहे असेम्बली और कौंसिल ऑफ स्टेट में मैं भले ही अंग्रेजी में बोलता हूं क्योंकि नियम के अनुसार वहां ऐसा करना पड़ता है, इस विधान-परिषद् में मैं राष्ट्रीय भाषा में ही बोलना पसंद करूंगा। मैं प्रस्ताव का समर्थन करने और जो उस पर संशोधन पेश हुआ है, उसका विरोध करने के लिए यहां उपस्थित हुआ हूं। परन्तु प्रस्ताव का समर्थन करते हुए भी मैं माननीय डॉक्टर अम्बेडकर को उनकी सुन्दर वक्तृता के लिए बधाई देना चाहता हूं। डॉ. जयकर का भाषण सुनकर कल मैं दंग रह गया। उनका और मेरा सम्बन्ध स्वराज्य पार्टी के दिनों से है। मैं उनके सुधार को समझ सकता था। मुस्लिम लीग के भाइयों के लिए यदि वे चाहते थे कि प्रस्ताव पर अभी वोट न लिया जाये और इस पर बहस मुल्तवी रखी जाये, उसे भी मै समझ सकता था। लेकिन जो दलीलें उन्होंने अपने भाषण में दीं वह मेरी समझ में नहीं आईं। जहां तक उनके भाषण का कानूनी पहलू है उसके मुतल्लिक मैं कुछ नहीं कहना चाहता। वह तो वकीलों का काम है लेकिन उनके इस कथन पर कि यदि हम इस प्रस्ताव को पास कर देंगे तो हमारा काम ही खत्म हो जायेगा और जो बात हम चाहते हैं, नहीं

प्राप्त कर सकेंगे, मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ और सन् 1920 से पहले के वे दिन याद आ गये जब हमारे कौमी दल के भाइयों को कोई रास्ता नहीं दिखाई देता था, और उन्हें हर चीज में हर मौके पर एक निराशा और नाउम्मेदी दीख पड़ती थी। हम जब यहां कुछ करने बैठे हैं, तो यह सोचकर नहीं बैठे हैं कि हम जो कुछ करेंगे, उसका कोई नतीजा ही नहीं निकलने वाला है। हम देखेंगे कि उसका नतीजा निकलता है, हम उसका नतीजा निकालेंगे। हम क्या-क्या करने वाले हैं, कितनी दूर तक जाने वाले हैं, इस सम्बन्ध में आज कुछ कहने की जरूरत नहीं है।

आज तो इतना ही कहना काफी है कि हम देखेंगे कि हम जो कुछ कर रहे हैं, उसका ठीक और जल्द से नतीजा निकलता है।

डॉ. जयकर साहब ने युद्ध की बात कही है। जहां तक कांग्रेसवादियों का सम्बन्ध है, सत्याग्रह सिद्धान्त मानने वालों का सम्बन्ध है, मैं कहना चाहता हूं कि वे सदा शांति चाहते हैं, युद्ध नहीं। लेकिन वह सच्ची शान्ति चाहते हैं। महात्मा जी की जो दुनिया को सबसे बड़ी देन है, वह सत्याग्रह की देन है। सत्याग्रही शांति चाहते हुए भी जब देखते हैं कि सच्ची शान्ति की स्थापना बिना युद्ध के नहीं हो सकती, उस समय युद्ध करने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगाने को तैयार हो जाते हैं। इसलिए मैं यह कहता हूं कि हम युद्ध नहीं चाहते बल्कि शान्ति चाहते हैं, न तो हम मुसलमानों से लड़ना चाहते हैं और न ब्रिटिश गवर्नमेंट से, लेकिन यदि ब्रिटिश हुकूमत मुसलमानों को शिखंडी बनाकर हमसे लड़ाना चाहती है तो हम भीष्म पितामह को तरह इसलिए शस्त्र नहीं रख देंगे कि हमारे सामने शिखंडी खड़ा किया गया है। हम चाहते हैं कि हमारे मुसलमान भाई आवें और हमारा साथ दें, परन्तु हमारे यह सब चाहने पर भी हमारे धैर्य रखने पर और शान्ति चाहने पर भी यदि वे नहीं आना चाहते हैं तो हम इसके लिए काम नहीं रोकेंगे।

डॉ. जयकर साहब ने हमें यह नहीं कहा कि 20 जनवरी तक यदि हम इस प्रस्ताव को मुल्तवी कर दें तो हमारे लीगी भाई आ जायेंगे। यदि हमको यहां पर यह कहा जाता, यह आश्वासन दिया जाता कि अगर हम इस प्रस्ताव को मुल्तवी कर दें तो हमारे मुसलमान भाई यहां आने को तैयार हैं, तो मुझे उम्मीद है कि पं. जवाहरलाल नेहरू पहले व्यक्ति होते जो यह कहते कि यदि हमारे मुसलमान भाई यहां आने को तैयार हैं तो इस प्रस्ताव को मुल्तवी कर दिया जाये। जहां तक प्रस्ताव का सम्बन्ध है, पंडितजी ने बहुत ही ठीक कहा था कि यह प्रस्ताव नहीं है एक प्रतिज्ञा है, और जब हम किसी प्रस्ताव को मंजूर करते हैं, उस पर दस्तखत करते हैं, तो हमको समझ लेना चाहिए कि हम कितनी बड़ी जिम्मेदारी ले रहे हैं। विधान-परिषद् का यह प्रस्ताव एक प्रतिज्ञा-पत्र है और जब हम उसे पास करें तो हमें पूरी जिम्मेदारी के साथ उसे पास करना चाहिए। इस प्रस्ताव

[सेठ गोविन्ददास]

में रिपब्लिक की बात कही गयी है। वह रिपब्लिक लोकतंत्रीय होगा या समाजतंत्रीय होगा। इस सम्बन्ध में अलग-अलग मत हो सकते हैं, लेकिन इस समय इस वाद-विवाद में पड़ना निरर्थक है। दुनिया को जिस समय जिस चीज की जरूरत होती है वह चीज आपसे आप होकर रहती है। हमारे देश की जो दशा है, उसे देखते हुए हमारा रिपब्लिक लोकतंत्रीय और समाजतंत्रीय दोनों ही होना चाहिए। समाजवाद से जो लोग घबड़ाते हैं, समाजवाद का नाम सुन कर कांपने लगते हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूं कि इस समय जिनके पास कुछ नहीं है वही दुखी नहीं है, बल्कि जिनके पास सब कुछ है, वे उनसे ज्यादा दुखी हैं। जिनके पास कुछ नहीं है, वह यदि इसलिए दुखी हैं कि उनको सब कुछ प्राप्त करने की इच्छा है; तो जिनके पास सब कुछ है, वे इसलिए दुखी हैं कि वे नाना प्रकार के षड्यंत्र करते हैं ऐसी बातें करते हैं, जो नैतिकता की दृष्टि से कभी भी उचित नहीं कही जा सकती। वह लोग जिनके पास सब कुछ है यदि नैतिकता से हटकर उसकी रक्षा करने की कोशिश करते हैं, उसको कायम रखने की कोशिश करते हैं तो मैं कहूंगा कि उनको सच्चा सुख कदापि नहीं प्राप्त हो सकता। इसलिए आज भले ही मैं उस फिरके से आया हूं जिसके पास सब कुछ हैं, लेकिन मैं महसूस करता हूं कि देश और संसार का जो कुछ नक्शा देख रहा हूं उसमें जो लोग रहते हैं चाहे वे अमीर हों या गरीब, उनको सच्चा सुख अगर किसी रास्ते से मिल सकता है तो वह स्वराज्यवाद के रास्ते से ही मिल सकता है। दूसरे किसी रास्ते से नहीं। इसलिए हमारा जो रिपब्लिक होगा। वह लोकतंत्रीय और समाजतंत्रीय दोनों ही होगा। इसमें किसी को संदेह नहीं होना चाहिए। और जहां तक एंग्लो-मुस्लिम पैक्ट को रोकने का सम्बन्ध है, मैं कहना चाहता हूं कि अंग्रेज और मुस्लिम लीग के भाई मिलकर भी हमारे इस प्रस्ताव को नहीं रोक सकेंगे। हमारा इतना बड़ा देश है; इसकी इतनी बड़ी आबादी है कि यदि इंग्लैंड वाले चाहें भी तो हमारे देश की आजादी, उन्नति और स्वतंत्रता को नहीं रोक सकते। जहां तक हमारे मुस्लिम लीग के भाइयों का सम्बन्ध है, मैं उनसे एक बात कहना चाहता हूं और बहुत जोर देकर कहना चाहता हूं, वह यह है कि अंग्रेज तो विदेशी हैं। वह यदि इस देश की आजादी में बाधक भी हों तो इतिहास में वह दोषी नहीं होंगे, लेकिन जो लोग इस देश में पैदा हुए हैं, इस देश की आवोहवा में पले हुए हैं और इस देश का अन्न खाते हैं और पानी पीते हैं, वह यदि इस देश की आजादी रोकने की कोशिश करेंगे तो उनकी भावी संतानें भी उनके सर पर काला टीका लगाये बिना न छोड़ेंगी। इसलिए जहां तक अंग्रेजों का सम्बन्ध है हमने कह दिया कि वह हमारी आजादी नहीं रोक सकते, लेकिन जहां तक मुस्लिम लीग के भाइयों का सम्बन्ध है मैं यह साफ कह देना चाहता हूं कि अगर उन्होंने अंग्रेजों से मिलकर

इस देश को परतंत्र रखने की कोशिश की तो भावी इतिहास और आने वाली पीढ़ियां उन्हें दोष देंगी।

यदि ब्रिटिश गवर्नमेंट ने अपने इधर गत दिनों के वक्तव्यों के अनुसार इस बात की कोशिश की कि विधान-परिषद् के फैसले के बिनां पर नवीन भारतीय शासन-विधान न पायें तो मैं उनको बताये देता हूं कि इस दशा में उनके सारे प्रयत्न व्यर्थ होंगे। उन्होंने हमेशा ही हिंदुस्तान को और दूसरे अधीनस्थ देशों को इस बात से रोका है कि वे अपनी समस्याएं न हल कर पायें, उन्हें हमेशा अपने आधीन रखने की कोशिश की है; यदि इस देश के साथ आप भी यही रवैया रखेंगे तो शायद कभी भी वह वक्त न आये कि हम ब्रिटिश पार्लियामेंट में भारतीय शासन-विधान पेश करें और भारत और इंग्लैंड की संधि पर हस्ताक्षर हों। मैं कांग्रेस की ओर से यह बात नहीं कह रहा हूं। मुझे तो भविष्य दिखाई दे रहा हूं। यदि अंग्रेजों ने विधान-परिषद् द्वारा निर्मित विधान न माना तो यहां पर एक ऐसी समानान्तर गवर्नमेंट की स्थापना होगी जो समूचे इंगलिस्तान से लड़ेगी। सात समुद्र पार से आये हुए लोग कभी भी हमारी अहिंसात्मक लड़ाई को नहीं जीत सकेंगे, इसका मुझे पूरा विश्वास है।

मैं आपका ज्यादा समय नहीं लेना चाहता इसके पहले कि मेरे पास चिट पहुंचे मैं अपना वक्तव्य समाप्त कर देना चाहता हूं। मैं फिर कहता हूं कि आप पूरी जिम्मेदारी के साथ इस प्रस्ताव को प्रस्ताव नहीं प्रतिज्ञा समझ कर पास करें और इस तरह आगे बढ़ें, जिस तरह एक स्वतंत्र देश आगे बढ़ता है।

सभापतिः 1 बज चुका है। अब सभा कल प्रातः 11 बजे तक के लिए स्थगित होती है। दोपहर को नियम-निर्माण समिति (Rules Committee) की बैठक है, इसलिए हम लोग उस समय समवेत नहीं हो सकते।

इसके बाद सभा बुधवार ता. 18 दिसम्बर सन् 1946 ई. को प्रातः 11 बजे के लिए स्थगित हुई।

———